॥ ओ३म् ॥

# प्रभु से विनय

हे ब्रह्म! मैं तेरी शरण में आया हूँ और जहाँ भी मैं जाता हूँ वहाँ तुझे ही दृष्पात करता हूँ। प्राची दिक् में, पूर्व में अग्नि का प्रावधान हो रहा है और दक्षिण में इन्द्र बन करके रहते हो और प्रतीची दिक् में वरुण बन करके रहते हो उदीची दिक् में सोम बन करके रहते हो ज्ञान के भण्डार हों, ध्रुवा में पालन करने वाले विष्णु हो और ऊर्ध्वा में पालन करने वाला बृहस्पति कहलाता है। वह प्रभु! की उपासना करता है प्रातः काल कहता है कि प्रभु पाप करने के लिए कहाँ जाऊँ और मेरे द्वारा पाप क्यों हों? हे प्रभु! मुझे इतनी शक्ति प्रदान करो कि मैं पूर्व में अग्नि के तुल्य तेज को दृष्टिपात करता रहूँ, मैं दक्षिण में इन्द्र को दृष्टिपात करता रहूँ। और अन्न का जो भण्डार है जो मानव को वृत्त बनाता है। हे प्रभु! प्रतीची में तुम वरुण बन करके रहते हो और वह वरुण ही मेरे जीवन की सार्थकता है इसी प्रकार उदीची में सोम बन करके रहते हो। सोम किसे कहते हैं? ज्ञान को सोम कहते हैं, विज्ञान को सोम कहते है। विवेक को सोम कहते हैं वह धारण होने वाला सोम हैं योगीजन इसी सोम को पान करते हुए ज्ञान और विवेक से सने हुए अमृत को प्राप्त करते हैं। तो उनकी वाणी में सोमपन आ जाता है। प्रभु! आप ध्रुवा में पालन करने वाले विष्णु बन करके रहते हो, आज हम सबकी पालना करने वाले हों और ऊर्ध्वा में प्रभु! आप बृहस्पति बन करके मेरे जीवन के रक्षक बनते हो, क्योंकि रक्षा विद्या और विवेक से होती है ज्ञानी ही संसार में महान कहलाता हैं और उसका नेतृत्व करने वाला बृहस्पति कहलाता हैं।

**पूज्यपाद-गुरुदेव**

अंक : 533 कुल पृष्ठ संख्या समग्र अंक : 608
वर्ष : 45 44 समग्र वर्ष : 51

# अनुक्रम


| क्रम संख्या | विषय | पृष्ठ संख्या |
|---|---|---|
| 1. प्रभु से विनय | पूज्यपाद-गुरुदेव | 3 |
| 2. अनुक्रम | | 4 |
| 3. महाराजा दिलीप की नन्दनी सेवा | पूज्यपाद-गुरुदेव | 5-21 |
| 4. रूढ़ि और राष्ट्र-उत्थान | पूज्यपाद-गुरुदेव एवम् महर्षि महानन्द मुनि जी | 22-38 |
| 5. ऋषियों के उद्‌गार | | 39 |
| 6. दान, पुस्तकों की सूची व प्राप्ति के स्थान तथा सूचना इत्यादि | | 40-42 |


# चतुर्वेद ब्रह्म पारायण महायाग

परमपिता परमात्मा की असीम अनुकम्पा से एवम् पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (पूर्व शृङ्गी ऋषि जी) के शुभ आशीर्वाद से प्रति वर्ष की भाँति इस वर्ष भी चतुर्वेद ब्रह्म पारायण महायाग का आयोजन लाक्षागृह बरनावा में श्री महानन्द संस्कृत महाविद्यालय के प्रांगण में दिनाँक 26 फरवरी, 2017 से 5 मार्च, 2017 तक बड़े हर्ष एवम् उल्लास के साथ आयोजित किया जा रहा है जिसमें आप सब अपने सम्बन्धियों व मित्रों सहित सादर आमन्त्रित हैं।

**श्री गाँधी धाम समिति (पञ्जी.)**

।। ओ३म् ।।

# महाराजा दिलीप की नन्दनी सेवा

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेद वाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेद वाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महती का वर्णन किया जाता है, क्योंकि वह मेरा देव महिमावादी है। उसकी अनुपमता इस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के एक-एक कण-कण में व्याप्त हो रही है, अथवा एक-एक धाराओं में उसकी महानता का प्रायः हमें दिग्दर्शन होता रहता है। क्योंकि जितना भी यह जड़ जगत् अथवा चैतन्य जगत् एक तरङ्गों के रूप में हमें दृष्टिपात आता रहता है, उन नाना प्रकार की तरङ्गों में वह तरङ्गित होने वाला एक अनुपम महान देव कहलाया गया है। जिस देवता के सम्बन्ध में परम्परागतों से ही मानव अपने मानवीयता का दिग्दर्शन करता रहा है और यह विचारता रहा है कि मैं जब तक उस अनुपम चेतना के समीप अपने को नहीं ले जाऊँगा तब तक वह अपने जीवन को अन्धकारवश स्वीकार करता रहता है।

## आनन्दमयी ज्योति की कामना

इसलिए हमारा वेद का मन्त्र हमें उस मार्ग के लिए प्रेरित कर रहा है जहाँ परमपिता परमात्मा का हमें सदैव दिग्दर्शन होता रहता है। जिस मानवीय दर्शन के लिए प्रत्येक मानव अपनी आभा में निहित रहता है। तो आज हम उस परमपिता परमात्मा की महती अथवा उसके गुणों

का गुणवादन करते रहें क्योंकि जिसका यह अनुपम जगत् है अथवा एक-एक तरङ्गे उस महान परमब्रह्म परमात्मा से व्याप्त रहती हैं। तो हमें उस व्याप्त परमपिता परमात्मा की महती को सदैव अपने अन्तर्हृदय में धारण कर लेना चाहिए। क्योंकि प्रत्येक मानव के हृदय में यह पिपासा रहती है कि प्रत्येक मानव अपने मनों में, हृदयग्राही बना रहता है कि मैं उस परमपिता परमात्मा को जानने के लिए तत्पर हो जाऊँ। प्रत्येक मानव के हृदय में यह आकांक्षा लगी रहती है चाहे वह किसी भी क्षेत्र में रहने वाला प्राणीमात्र क्यों न हो, परन्तु वह सदैव आनन्द के लिए, आनन्दित होने के लिए सदैव एक महान कामना करता रहता है और विचारता रहता है कि मैं परमपिता परमात्मा की महती और आनन्दमयी ज्योति में तर रहना चाहता हूँ।

आओ मेरे प्यारे! जब हम एक-एक वेद मन्त्र के शब्दों के ऊपर यह विचार-विनिमय प्रारम्भ करने लगते हैं कि हमारा जो मानवीय जीवन है उसका समन्वय उस परमपिता परमात्मा से उसकी चेतना में रत्त रहता है और उसी का पिपासी बना रहता है। तो इसलिए हम उस परमपिता परमात्मा के आनन्दमयी प्रकाश और आनन्द को जानने के लिए हम सदैव तत्पर रहते हैं। आज का हमारा वेद मन्त्र हमें कुछ ऊँची-ऊँची प्रेरणा दे रहा था और हमें प्रेरित कर रहा था कि मनोवाहा स्वजन्म मेधाम् मदनंवृतीवृष्टतं वाचा कृतवस्थाः'' परमपिता परमात्मा जो आनन्दमयी कहलाता है जो मानव के अन्तर्हृदय में विद्यमान है। तो हम परमपिता परमात्मा को अपने अन्तर्हृदय में अन्तर्मुखी हो करके उसको ध्यानावस्थित हो जाएँ।

आज का हमारा वेद मन्त्र हमें नाना प्रकार की जहाँ प्रेरणा दे रहा है, आज मैं तुम्हें उसी क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ जहाँ यह हमारा वाक् हमारे विचारों का समूह देखो कई समय से कटिबद्ध हो रहा है। राजा रघुवंश रघु के पिता महाराजा दिलीप जी की प्रारम्भ से कई समय

से हम चर्चाएँ कर रहे हैं। आज भी हम उसी क्षेत्र के लिए अपने में कटिबद्ध हो करके उसके ऊपर कुछ चिन्तन करना चाहते हैं। महाराजा दिलीप जी कामधेनू की जहाँ रक्षा करते रहते थे उसकी सेवा में सदैव तल्लीन रहते थे, परन्तु नन्दनी का जब जन्म हो गया तो नन्दनी की सेवा करते रहते थे। कामधेनू और नन्दनी मुनिवरो! यह नाना पर्यायवाची नहीं है। एक ही सूत्र के दोनों मनके कहलाते हैं और विचारा जाता है कि यह धेनु शब्द है अथवा नन्दनी शब्द है।

## धेनु की व्याख्या

यह जो धेनु है इसलिए इसे धेनु कहा जाता है क्योंकि यह दुही जाती है। इसको दुहने के लिए, इसलिए इसे धेनु कहा जाता है। दुहने के लिए मैंने तुम्हें कई चर्चाएँ की हैं विचार दिया है कि धेनु शब्द का अभिप्रायः व्यापकवाद है। धेनु उसी को कहते हैं जो व्यापकवाद में रत्त रहता है। जब व्यापकवाद में मानव अपने को ले जाता है तो कामधेनू की भाँति अपनेपन में अपनेपन को ले जाता है अथवा उसमें प्रतिष्ठित करा देता है। तो विचार दे रहे थे कि महाराजा दिलीप जी अपने क्षेत्र में जब प्रवेश किया करते तो देखो दोनों वाक्यों पर महाराजा दिलीप जी बहुत गम्भीरतापूर्वक गम्भीरयुक्त हो करके अपने विचारों को बाह्य जगत में उसका शूचन करते रहते थे।

## महाराजा दिलीप का श्वेताश्वेतर मुनि के आश्रम में याग

मैंने अभी-अभी तुम्हें चर्चाएँ कीं कि कामधेनू को लेकर के महाराज दिलीप जी अपने राष्ट्र में अपनी कृतिकाओं में नाना प्रकार का चिन्तन और मनन करते रहते थे। उस मननशील की अनुपम एक शैली कहलाती है, वह बड़ी अनुपम और विचित्रतम में रमण करने वाली है। परन्तु आज का हमारा वेद मन्त्र कुछ कह रहा है, कुछ प्रेरणामयी वाक्यों का प्रतिपादन करा रहा है। महाराजा दिलीप जी नन्दनी को लेकर के वह श्वेताश्वेतर मुनि के यहाँ विराजमान हो गये। श्वेताश्वेतर ने इन दोनों

राजा का और नन्दनी का सेवार्थ विभाजन वृहें वृत ब्रह्म वाचाः उनसे कुछ विचार विनिमय हो रहा था। तो मुनिवरो! महाराज दिलीप जी ने महाराजा श्वेताश्वेतर से कहा महाराज! मैं अपनी नन्दनी की सेवा कर रहा हूँ। नन्दनी यह देवताओं की धरोहर महाराजा इन्द्र के यहाँ से प्राप्त हुई, तो मैं नन्दनी की सेवा करने वाला हूँ अथवा इसका सेवक हूँ। तो दोनों अपने-अपने में रत्त होने लगे। 'कामाम् गृहे वाचाः सम्भवमि वाचनमो ब्रह्माः वैभव सम्भवाः' कामधेनू अपने में आनन्दित विचरण करती रहती थी। तो नन्दनी भी इसी प्रकार अपने में रत्त रहती, अपने में आनन्दित हो जाती। एक समय महाराजा श्वेताश्वेतर और महाराज दिलीप जी विद्यमान थे। महाराज दिलीप जी प्रातःकाल में नन्दनी के गौधृत के द्वारा याग करते थे। सुगन्ध में जन्म लेकर के वे उसे सुगन्धित बनाते रहते थे। नाना प्रकार की समिधाओं को लेकर के जब राजा गौधृत के द्वारा जब वह यज्ञ करते तो यज्ञों में पवित्र-पवित्र समिधाओं उनका शोधन करने के पश्चात् उस समय अग्न्याधान करते तो वह अग्नि की धाराएँ विचित्रता को लेकर के अपने स्वरूप में प्रायः परणित होती रहतीं। जब वह अपने स्वरूप में परणित होतीं, तो मुनिवरो! उनके ऊपर विचार-विनिमय किया जाता। समिधाएँ इस प्रकर की होती हैं जो अग्नि में प्रवेश करने से मानव के अन्तःकरण क्या, मानव के शरीर का औषध बन करके रहता है।

बहुत-सी इस प्रकार की औषधियाँ उसका सूक्ष्मतम रूप जब भयङ्कर अग्नि का भेदन कर देती है तो उसका सूक्ष्मतम स्वरूप बनकर के अनुसङ्ग ओतप्रोत हो जाता है, उसी में रत्त हो जाता है। तो विचार-विनिमय क्या? कामधेनू अपने में सुसज्जित बन गईं। अपने विचारों को ले करके महानता की ज्योति अपने में ज्योतिवान बन जाती है। देखो पूर्वाभिमुख हो करके यजमान जब यज्ञ करता है तो वह अग्न्याधान करता है वह अग्नि के ऊपर ध्यानावस्थित हो जाता है। अग्नि एक-दूसरे के सन्निधान से, एक-दूसरे के सङ्गतिकरण से वह उपज रही है, वह प्रकाश दे रही है, वह

अपने में प्रकाश दे करके आदित्यों को प्रकाशवान बना रही है। वही अग्नि मही अमृताम् ज्योति कहलाता है।

## महर्षि श्वेताश्वेतर महाराजा दिलीप के प्रश्नोत्तर

यज्ञ करने के पश्चात् महाराजा दिलीप जी और महर्षि श्वेताश्वेतर दोनों का विचार-विनिमय होना प्रारम्भ हो गया था। कहीं से भ्रमण करते हुए महर्षि बटुक महाराज आश्रम में प्रवेश कर गये। परन्तु जब बटुक मुनि महाराज और ऋषि मुनि विद्यमान हो गये तो महाराजा दिलीप जी ने श्वेताश्वेतर से एक प्रश्न किया कि महाराज एक वेद का एक मन्त्र है और वेद का मन्त्र यह कहता है 'सृष्टि प्रणमवमभोवहा वज्यतं देवं ब्रह्माः वायु सम्भवा देवों अग्निम् ब्रह्म-वाचो देवोभ्यो, बहु सम्भवा देवोरम्भा वाचन्नमः स्नाः'। तो मुनिवरो! महाराजा दिलीप ने कहा यह तो मैं भलीभाँति जान गया हूँ कि समाज का जब कल्याण–**मानव का जब कल्याण प्रारम्भ होता है तो मानव के अन्तर्हृदय से नाना प्रकार की तरङ्गों का जन्म होता है। जिन तरङ्गों को जान करके, जिन तरङ्गों को तरङ्गित हो करके अपने जीवन को ऊँचा बनाया जाता है।** अपने जीवन को महान बनाया जाता है।

### प्रलय काल

महाराजा दिलीप जी ने यह प्रश्न किया कि महाराज! वेद मन्त्र कहता है कि जिस समय प्रलय का काल आता है, तो प्रलय के काल में यह ब्रह्माण्ड, एक-दूसरे में लय हो जाता है। जैसे जिस प्रकार जिस क्रम से इसकी रचना होती है, उसी क्रम से यह समापन हो जाती है। जैसे तीव्र गति से इसका जन्म हुआ ऐसे ही तीव्र गति से इसका समावेश हो जाना है। जब दोनों का समावेश हो जाता है तो दोनों अपने में रत्त हो जाते हैं।

परन्तु मुझे कुछ ऐसा स्मरण आता रहा है जो मैंने बहुत पुरातन

काल में भी वाक्यों के ऊपर टिप्पणियाँ दई। परन्तु आज भी उन वाक्यों के ऊपर टिप्पणियाँ देने वाला हूँ। मुनिवरो! वाक् कहता है 'वृष्वामि वृही वाचाम् देवो ब्रह्मवाहाः कृतीम् लोकाम् अग्निः'। नाना प्रकार की विचारणीय धाराओं में अग्नि को ले करके जब वह अग्न्याधान करते हैं, उस अग्नि में प्रविष्ट हो करके अपने को अग्निवान् बना करके और वह शत्रुता और मित्रता दोनों को एक-दूसरे में प्रवेश करा करके पार होना उनके लिए स्वाभाविक गुण बन जाता है। तो जब महाराजा ने यह वाक् 'ब्रह्मवाचाः प्रहे लोकाम् हिरण्ये वृथाः' महाराजा दिलीप जी ने यह कहा कि हे भगवन्! मेरा यह जीवन कितने समय की 'प्रतिभा' प्रतीक्षा में लगा हुआ है। तो मुनिवरो! उन्होंने कहा 'सम्भवा! वाचाम् दिव्यंगतं ब्रह्मा वायुः अपदेवी देवो ब्रह्मवाहा सुस्तं वाचन्नमः' ऋषि ने कहा कि वेद का मन्त्र कहता है कि प्रलय-काल में जब यह प्रकृति एक अपने स्वरूप में परणित हो करके वह अग्नि ब्रह्म की गोद में विद्यमान हो जाती है, तो यह जो प्रलय-काल होता है एक-दूसरे में लय हो जाता है। तो उन्होंने कहा कि ब्रह्म यज्ञ की विवेचना होनी चाहिए।

जब **ब्रह्मयज्ञ की विवेचना** होने लगी, 'ब्रह्मयाज्ञं देवों याज्ञं प्रथमवृहे याज्ञं भविते देवाम् यागांब्रह्म लोकाः यागाम् ब्रह्मलोकाम् अग्निः' यहाँ ब्रह्मलोक की चर्चाएँ होती रहती हैं। नाना प्रकार की भव्य चर्चाएँ होती रहतीं, जिनके जानने के लिए मानव अपने में रत्त रहता है, संसार को ऊँचा बनाता है। परन्तु देखो उसकी महानता का सदैव दिग्दर्शन होता रहता है। आनन्दमयी बनाने के लिए सदैव तत्पर रहता है।

मेरे प्यारे! महाराजा दिलीप जी के प्रश्नों का उत्तर देते हुए श्वेताश्वेतर ने कहा कि महाराज जब प्रलय-काल आ जाता है तो इससे 'जलं ब्रह्मा वाचाम् भूपणम् वाचन्नं वृहे अग्नि देवाः। ये अपने में रत्त रह करके मुझे शिक्षित बनाती रहती है। महाराजा दिलीप जी के इस प्रश्न के करने के पश्चात् मुनिवरो! वेदना की अनुपम एक जागरूकता हो जाती है और जब अनुपमता की जागरूकता हो जाती है तो उस

समय कामधेनू क्या ये नाना ब्रह्माण्ड स्थावर गृहे एक उत्तीष्ण क्रिया निष्ठ क्रिया बन करके मानव के अन्तःकरण को प्रकाश में रत्त कर देती है। मुझे कुछ स्मरण है कि महाराजा दिलीप जी ने जैसे ही इसका अनुष्ठान किया, अनुसरण अनुभूमिका बनाई परन्तु उस समय इसके रूप का कुछ और विशुद्ध रूप बन गया। तो विचार क्या? ऋषि कहता है मैंने इस संसार को बहुत समय से दृष्टिपात किया। परन्तु मैं तो इस वाक् को नहीं जानता कि जब प्रलय-काल होता है तो आत्मा अपने स्वरूप में रत्त हो जाता है। यह प्रकृति सूक्ष्म रूप बन करके एक अन्तरिक्ष में, अपने स्वरूप में परणित हो जाती है। राजा ने कहा, 'तो प्रभु! मैं यह जानने आया हूँ कि यह अपने में विशुद्ध अपने में धारामयी आनन्द को मनाते हुए अपने में उज्ज्वल स्वरूप को जो धारण करता है वह महान बन जाता है। तो हे प्रभु! आपकी महानता इसमें दृष्टिवान् नहीं हो रही है? उन्होंने कहा 'ब्रह्मवाचो देवाः? देखो कोई वाक् अन्तिम जब चरण आता है, तो अपने में अपनेपन को लिए, ऊँचे आभाओं में ऊँचे रुदों में अपने को ले जा करके महानता की ज्योति का दिग्दर्शन कराता है। तो ऋषि ने कहा कि जिस समय प्रलय-काल होता है तो यह जो पञ्च महाभूत हैं यह शून्य बिन्दु में प्रवेश कर जाते हैं। उसी शून्य बिन्दु में जब यह महातत्त्व ओतप्रोत हो जाते हैं तो नाना प्रकार की धाराओं को ले करके मेरे नाना प्रकार की जीवन और धाराओं में रत्त रह करके अपने को महान् बनाने का प्रयास करने लगता है।

मैं तुम्हें विशेष विवेचना देने नहीं आया हूँ। मैं तो केवल तुम्हें कुछ विचारों का परिचय देने आया हूँ। और वह परिचय क्या है? उस परिचय की मैं चर्चा कर रहा था, जब महाराजा दिलीप जी ने यह प्रश्न किया तो महाराजा श्वेताश्वेतर ने कहा कि इस **अन्तरिक्ष में जाए हुए इस परमाणुवाद की तीन प्रकार की श्रेणियाँ कहलाती हैं।** एक श्रेणी सतोगुण है, दूसरी श्रेणी का नाम रजोगुण कहलाता है, तृतीय श्रेणी का नामोकरण तमोगुण है। तो जब महाराजा दिलीप ने कहा कि आत्मा के जैसे तीन

प्रकार के परमाणु हैं 'भूः भुवः स्वः' परमाणुओं में जो तीन प्रकार के हैं इन्हीं में कहीं-न-कहीं आभा भी वह तरङ्गित हो जाती है, उन तरङ्गों में ओत-प्रोत हो जाती है। इन तरङ्गों का विशेषकर मुझे अपने तक सीमित नहीं बना देना है। तो ऋषि ने कहा कि तीन प्रकार की प्रलय के काल में भी श्रेणियाँ बनी रहती हैं। अब हम उत्तम और मध्यम, 'मध्यम बृही वाचप्रहे' पञ्च महाभूतों की प्रतिभा का अनुपमता में जन्म हो रहा है, उसकी धारा में अपनी धारा को ले जाने का प्रयास होता रहता है। तो महाराजा दिलीप ने जब यह प्रश्न किया, तो महर्षि श्वेताश्वेतर ने कहा कि जब प्रलय-काल होता है, प्रलय-काल में यह ब्रह्माण्ड जो दृष्टिपात आने वाला है, यह पृथ्वी में, पृथ्वी इस महान जल में और जल अग्नि में, जो तेजोमयी कहलाता है। और तेजोमयी बन करके 'यज्ञं' भविता यज्ञशाला प्रहेवाचो देवो ब्रह्मवाहाः वाचन्नमं ब्रह्मेकृतं लोकाः वह **जो तीन प्रकार की श्रेणी हैं वही तो मानव का उद्‌बुद्ध कर देती हैं, वहीं मानव की धाराओं में मानवीयता का एक दर्शन होना प्रारम्भ हो जाता है।** ऋषि कहता है हमारा जो कथन है वह ममत्व को धारण किए हुए रहता। इस आभा को हमें विशेषरूप से अपनाना नहीं है। केवल उसको अपने साथ ऊर्ध्वा में ले जाना है, जिस ऊर्ध्वा के ऊपर प्रत्येक मानव का अन्तर्हृदय एक-एक धारा में रत्त रहने वाला है।

श्वेताश्वेतर ने कहा कि वह तीन प्रकार की जो श्रेणी होती हैं जो रहने वाली हैं जो मध्यमाम् अपने-अपने आभा में यह रत्त हो रही हैं, गतियाँ कर रहे हैं और जिस समय प्रलय-काल आता है तो प्रलय के काल में यह एक वायु होती है जिसको **मृतिका वायु** कहते हैं। मृतिका नामक जो वायु है वह अन्तरिक्ष में विचरण करती रहती है। जब उस समान 'भो गाम् देवाः' जब प्रलय-काल में यह आत्मा जीवात्मा अपने स्वरूप में चला गया। अपने रूप में रत्त हो गया है, तो कोई ऐसा आश्चर्य क्या है? उन्होंने कहा कि आश्चर्य नहीं होता है परन्तु देखो वह क्रियाकलाप कहलाता है, वह तो महानता की ज्योति में हमें ले जाता है। वही तो

हमारे जीवन का एक सूचक बना हुआ है। हमारे जीवन की धारा का एक धारावाहिक अपने में अपने को लाना चाहता है।

विचार-विनिमय क्या? महाराजा श्वेताश्वेतर ने कहा कि एक आत्मा का सार जो ऊर्ध्वा में रहने वाला है एक द्यौ में भू में रहने वाला है जो द्यौ वाला है प्रलय-काल होता है, तो एक-एक यह ब्रह्माण्ड दृष्टिपात आने वाला पृथ्वी में, और पृथ्वी जल में, जल अग्नि में, अग्नि वायु में, वायु अन्तरिक्ष में और अन्तरिक्ष एक वचेश्वर 'नामम् पुच्छो वो हो वाचप' होता है परन्तु उसे पान करने से क्षुधा का विनाश हो, सान्त्वना को प्राप्त हो जाते हैं। उद्भुत होने वाला यह अनुपम जगत कहलाता है, जिसके ऊपर प्रत्येक मानव के अन्तर्हृदय में एक अनुपम ज्योति जागरूक बन करके रहती है, आनन्दमयी बन करके रहती है, जिसको अपनाकर, उसको मोक्ष की धारा कहते हैं। एक मानव देखो आत्मा मोक्ष में रहने वाला आनन्दवत् में रहने वाला, जैसे परमपिता परमात्मा उसे अपने गर्भ में, इस संसार को अपने गर्भ में धारण कर लेता है।

वह माता वसुन्धरा की भाँति, वसुन्धरा बन करके अपने मे उसे उसका सिञ्चन करना प्रारम्भ कर देती है। महाराजा दिलीप और देखो महर्षि जी दोनों की बहुत समय तक यह चर्चाएँ चलीं। परन्तु उन्होंने एक ही निर्णय दिया **तीनों प्रकार के जो कर्म होते हैं उन तीनों के कर्म भिन्न-भिन्न प्रकार की प्रतिभा वाले होते हैं।** परन्तु वह जो कर्मफल है 'अस्वं ब्रह्म वाचोः देवमानं ब्रह्म लोकाम् अहं वसत प्रही लोकाम्? इन वाक्यों को ले करके महाराजा ने अपने जीवन में यह अस्वतो धारण किया कि मैं नन्दनी की अवश्य सेवा करूँ। महाराजा दिलीप और श्वेताश्वेतर अपने-अपने हृदय के विचार परस्पर जो उनके हृदय में अंकित हो रहे थे उनकी वार्ता को वह प्रकट करने लगे। वे आनन्दतम अपने में अपने को ही जानने के लिए तत्पर होने लगे। तो प्रलयकाल में भी मोक्ष को जो मुमुक्षु होने वाली आत्मा है, वह अपने

आनन्द में ही रत्त रहने वाली है। परन्तु क्योंकि उनके अन्तःकरण नहीं होता, उनके पञ्च महाभूत वाला शरीरम् यह शरीर भी नहीं होता, तो द्वितीय प्राणी मात्र को अपने में अपनी धाराओं में उनको रत्त करती गति करने का हमारा एक विचार बनता है, हमारा जीवन बनता है।

## मोक्ष का स्वरूप

जीवन को बनाने के लिए मोक्ष की कामना करते रहते हैं। परन्तु जब यह प्रसङ्ग आता है, जब यह वाक् आता रहता है कि महाराजा ने यह प्रश्न किया, यह कहाँ तक यथार्थ माना गया है? जब यह वाक् उनके समीप आया तो उन्होंने कहा कि नाना प्रकार की आपों को एकत्रित करते हुए, उसकी आनन्दमयी धारा को मानव, पान करना चाहता है। तो मैं विशेष विवेचना में न ले जाता हुआ महाराजा दिलीप जी को ऋषि ने यह निर्णय दिया कि तीन प्रकार की जो श्रेणी वाली आत्माएँ होती हैं वही तो मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण करती हुई मोक्ष के आन्नद को ग्रहण करती हैं। उस आन्नद के लिए हमें प्रायः लालायित होना है। इस आनन्द के लिए हमें आनन्दित होना है जिस आनन्दमयी धारा को अपना करके इस सागर से मानव पार होने का प्रयास करता रहता है।

महाराजा दिलीप जी इन वाक्यों को पान करके मौन हो गये। उन्होंने कहा तीन प्रकार की श्रेणियाँ हैं और इस प्रकार की श्रेणियों वाले जो जीवात्मा, जो सब तरफ से उद्गमता को प्राप्त हो जाते हैं, आनन्द को प्राप्त होते हैं।

आज मैं विचार देता हुआ दूरी में न चला जाऊँ। अपने विचारों को व्यक्त करता हुआ मैं उच्चारण कर रहा था, महाराजा दिलीप जी जब निद्रा से जगारूक हुए सूर्य उदय हो रहा था। भानु अपना प्रकाश दे रहा था, परन्तु शनैः-शनैः अपने-अपने कार्यों में रत्त रह करके 'अग्रहो ननंतप्रही चोकवा सम्भवाः गृहीवम् वृहे वाचं वृहीतत् लोकाः' महाराजा दिलीप और ऋषि की दोनों की विचारधारा प्रारम्भ हुई।

महाराजा दिलीप ने कहा हे प्रभु! मैं जो कामधेनू को ले रहा हूँ उसका मेरा क्या मन्तव्य है? उन्होंने कहा 'आपान सम्भो वाचपृही लोकाम्'! उन्होंने कहा हाँ भगवन्! ऐसा ही हमारा विचार बन गया है कि हम अपने में ही आपको क्रियाकलाप के लिए सर्वत्र प्रियतम सर्वत्र प्रिय धाराओं में रत्त रहना है।

यह वाक् हमने नाना प्रकार के रूपों में इन विचारों की धाराओं को लेना प्रारम्भ किया तो श्वेताश्वेतर ने यह कहा हे राजन्! तुम प्रातःकालीन जो यज्ञ करते हो, वह जो यज्ञ है वह यज्ञ की आत्मा के लोक में विद्यमान हो करके यज्ञ करता है। जब ऋषि ने यह वाक् कहा तो राजा ने कहा प्रभु! यह वाक् यथार्थ है।

परन्तु जब यह वाक् मेरे प्यारे! महाराजा दिलीप जी ने पुनः श्रवण किया तो उन्होंने यह कहा कि प्रभु! मैं यह जानने के लिए आया हूँ मेरी उत्कृष्ट इच्छा है कि मैं नन्दनी की सेवा कर रहा हूँ। अब नन्दनी की सेवा करता हुआ, मैं यज्ञ करता हुआ भयङ्कर वनों में जा रहा हूँ। उन्होंने कहा बहुत प्रियतम!

## आश्रम का त्याग

इतने में कामधेनू नन्दनी जागरूक हो गई। राजा ने नन्दनी को ले करके वहाँ से आश्रम को त्याग दिया। आश्रम में नाना प्रकार के गम्भीर शंकाओं का निवारण हुआ। उन्होंने अपने निवारण के समय में यह कहा 'ज मां निर्वाणं भू वाचम् प्रहे सम्भवाः दिव्यं ममां वाच वृही लोकाम्। अक्षम् आचार लोको आचार भूताम् आचार्य लृप्तृ गृहे वृचो सम्भवा लोकाम् गृहे सम्भवेतु प्रियम वाचन्नमः' नन्दनी को ले करके महाराजा दिलीप जी ने आश्रम को त्याग दिया। भ्रमण करते हुए वह हिमालय की कन्दराओं में जा पहुँचे, वह हिमालय की कन्दराओं जहाँ मुनिवरो! देखो हिमालय की कन्दराओं में नाना प्रकार के शब्द, नाना

प्रकर की ध्वनियाँ उसमें प्रायः ध्वनित होती रहती हैं और तुम यह कहते हो कि मुझे इसका भान नहीं है।

## हिमालय की कन्दराओं में यज्ञ व चिन्तन

मेरे पुत्रो! मुझे कुछ ऐसा स्मरण है कि **महाराजा दिलीप जी प्रातःकालीन पूर्वाभिमुख हो करके गौधृत के द्वारा यज्ञ करते।** जब यज्ञ होता रहा, तो बहुत समय तक उनका यज्ञ भू में प्रारम्भ रहा, परन्तु यज्ञ की अपनी प्रतिभा अपना रत्त 'निर्वाया अनिष्टः निर्वाअणिस्वताः सुम्भवेत देवां वाचां भूतम् प्रवेः लोकाम्'। वही तो अपने आभा रत्त रहने वाला एक अनुपम धारा कहलाती है। जिसको अपना करके मानव अमरापुरी को प्राप्त हो जाता है। इसी प्रकार जब अमरापुरी की चर्चाएँ करता हूँ, अमरापुरी की वार्ताएँ आती हैं वहीं मेरा अन्तर्हृदय गद्गद् हो जाता है। प्रातःकालीन दिलीप जी ने यज्ञ किया और वह नन्दनी के समीप हो गए। नन्दनी के आन्तरिक धाराएँ थीं, वह कह रही थीं हे दिलीप जी! यह तुम्हें किसने कहा है कि तुम नन्दनी की सेवा करो। उन्होंने कहा कि महाराज मैं कुछ तो दर्शनों में इसका अध्ययन करता रहा हूँ। परन्तु कुछ समय ऐसा आया जो धर्म से वंचित हो करके पुनः यह प्रभु की एक अनुपम जागरूकता आ गई है। मैं उस जागरूकता में सदैव अपने को सौभाग्यशाली स्वीकार करता रहता हूँ। तो मुझे कुछ ऐसा स्मरण है कि ऐसा कुछ ज्ञात हुआ है कि वह नन्दनी अब रक्षार्थ के लिए, आनन्द के लिए वह भ्रमण करती हुई समगाथा वाचा नन्दनंगृही स्यै। आभाभुवन उस देवता का पूजन करें। नन्दनी सत्यपथी का चिन्तन करना प्रारम्भ किया। जब चिन्तन करने लगे तो बहुत समय हो गया, नन्दनी को जब क्षुधा ने पीड़ित कर दिया तो राजा नन्दनी को वन कन्दराओं के आंगन में ले गए जहाँ वह क्षुधा निवारण कर सके। दोनों परस्पर चर्चा करते रहते।

मेरे प्यारे! महानन्द जी मुझे कहते रहते हैं क्या पशु भी वार्ता प्रकट करता है? मैं यह कहता हूँ क्या पशु वार्ता नहीं करता है? पशु

क्या, देखो वार्ता तो एक-एक प्रकृति की ध्वनियाँ कह रही हैं। वह कुछ-न-कुछ अपने स्वरूप को ले करके वह प्रायः गतिशील रहती हैं। इसलिए कामधेनू जब अपने में गतिशील बनती है कामधेनू धनम् बृहम् वाचा! वह एक प्रिय धन है। जिसको अपना करके मानव का जीवन सम्पदावादी बन जाता है। नन्दनी की सेवा किन्हीं आचार्यों ने विशेषतम में परणित की है। परन्तु विचारा जाता है मेरे पूज्य 'प्राहाः वाचम् पृही सम्भवां लोकाम् वायु सम्भवु वृष्टानूदेवो वाचप-पिंगल विभुम् लोकाम्।' भयङ्कर वनों में महाराजा दिलीप जी अपना आनन्दयुक्त हो करके **प्रातःकालीन यज्ञ करते पूर्वाभिमुख हो करके** और नन्दनी के समीप विद्यमान हो जाते और नन्दनी से वार्ता प्रकट करते रहते।

## नन्दनी पर मृगराज का आक्रमण

नन्दनी अपने में नन्दवाहा वह धेनु कौन गऊ कहलाती है? परन्तु देखो वह धेनु कौन है? नन्दनी कौन है? वह जो वनों में विचरण करने वाली है। नन्दनी विचरण करते-करते वह पर्वतों की गुफा में झरना झर रहा था। तो कहा जाता है कि वे देखो यज्ञ में आ करके वहाँ मृगराज ने सिंहराज ने आ करके नन्दनी पर आक्रमण कर दिया। जब नन्दनी पर आक्रमण किया और महाराजा दिलीप जी की दृष्टि अब नन्दनी पर पहुँची तो नन्दनी अपने में शान्त है और वह सिंहराज उसको आहार बनाना चाहता है।

ऐसा कहता है लेखनीबद्ध करने वाला, उनके विचार ऐसा कहते हैं कि मुनिवरो! अपने में भावा-विभोर हो करके वह कहता हे सिंहराज! मैं जानता हूँ कि हम तुम्हारे राष्ट्र में हैं, परन्तु दूसरा भयङ्कर बनो का अधिराज है। राजा है और तू नन्दनी को अपना आहार बनाना चाहता है। नन्दनी को आहार बनाने से पूर्व तुझे मेरे शरीर का आहार बनाना होगा। मुझे आहार बना करके पान करना होगा। जब तू नन्दनी को अपना आहार बना सकता है। उस समय राजा ने जब ऐसा भावातुर

हो करके यह वाक् कहा, ऐसा मुझे स्मरण आता रहता है मृगराज ने कहा कि मैं ऐसे प्रतापी महाराजा को जिस राजा के राष्ट्र में, जिस राजा के यहाँ कोई हिंसक प्राणी किसी की हिंसा में अकारण नहीं बन पाता, जिस राजा के राष्ट्र में हिंसक देखो प्राणियों को हमको कोई नष्ट करने वाला नहीं है, हिंसक हिंसा करने वाला नही है, राजा अपने में प्रसन्न है। प्रजा अपने में प्रसन्न है, महापुरुष अपने में प्रसन्न हो रहा है हम अपने में प्रसन्नयुक्त हो करके सुन्दर और स्वतन्त्र रूपों में विचरण करते हैं। जिस राजा के राष्ट्र में हमें किसी प्रकार की विडम्बना नहीं है न राजा के राष्ट्र में किसी प्रकार के हमें हिंसक प्राणियों की नीति होती है। इस समय मृगराज सिंहराजा से कहता है अरे राजन्! तू तो महान् है। उसने नन्दनी को त्याग दिया। नन्दनी कहती है हे सिंहराज! मैं तेरा आहार हूँ, तू मुझे अपना आहार बना। सिंहराज ने कहा, मेरा तू आहार नहीं है। तू तो मानव राष्ट्र का जीवन है। **राष्ट्र में राष्ट्र का यदि कोई जीवन है तो वह गऊ है।**

## नन्दनी, गऊ आयैर धेनू का स्वरूप

'सम्भूति ब्रह्मवाचो देवाम् आभाम् द्यौब्रह्मवा लोकाहम्।' राजा कहता है हे नन्दनी! तू मेरी सम्पदा है, तू राष्ट्र की सम्पदा है, तू मेरे राष्ट्र का प्राण है, तू वैद्यराजों की औषधि बन करके रहता है। तो यहाँ देखा बाल्यकाल में अपनी आभा को ले करके तू राष्ट्र का प्राण बन करके रह। विचार आता है कि **राजा के राष्ट्र का यदि कोई प्राण है तो देखो वह गऊ धेनु है।** गौ नाम देखो इन्द्रियों का है। गौ नाम पशु का है, यह जो गौ नाम का पशु है राजा के राष्ट्र में यह राष्ट्र का प्राण बन करके रहता है। क्योंकि जिस राजा के राष्ट्र में दुग्ध देने वाला पशु होता है, गऊ होता है, उस राजा का राष्ट्र बड़ा पवित्र होता है। उसी प्रजा में कामातुरता नहीं होती। ऐसा हमारे यहाँ वैज्ञानिकों का कथन है।

मेरे प्यारे! एक समय ऋषि-मुनियों का एक समूह विद्यमान हुआ था। और किसी काल में ऋषि-मुनियों ने यह विचारा कि हम प्रजा को अनुशासन में, प्रजा को प्राकृतिक अनुशासन में लाना चाहते हैं। तो हमें क्या करना चाहिए। तो वैज्ञानिकों का यह कथन हुआ, ऋषि-मुनियों ने यह निर्णय किया था और वैज्ञानिकों ने किसी काल में कि दुग्ध देने वाला पशु हो और मानव जितना दुग्ध आहार करता है, जितना अन्न आहार करता है, उतना उसके हृदय में ब्रह्मभोजो का.... तजोमयी बनता रहता है। जब ब्रह्म तेजोमयी बनता रहता है, उसका ब्रह्मचर्य स्थिर है। स्थिरता को प्राप्त हो करके, कन्याएँ क्या, पुत्रवत् क्या धैर्य की धारणा बनी रहती है और वह धारणा शक्ति ही राष्ट्र में अनुशासन की प्रतिभा बन करके राष्ट्र को ऊँचा बना देती है। यह वाक् ऋषि-मुनियों ने किसी काल में कहा था।

इसके ऊपर तो कल मेरे प्यारे! महानन्द जी की बड़ी उत्कट इच्छा है कि मैं दो शब्द इस गऊ के सम्बन्ध में, धेनु के सम्बन्ध में अपने विचार दूँ। परन्तु वह कल उनका विचार दिया जा सकेगा। आज तो केवल हम इतना उच्चारण कर सकते हैं कि कामधेनू जो शब्द है कामना की पूर्ति करने वाला शब्द है। धेनु जो शब्द है धैर्य से धारणा शक्ति से इस धेनु का जन्म होता है और नन्दनी इसलिए कहलाती है जो 'नन्दनं वाचं ब्रह्मा' राष्ट्र का प्राण, नन्दनं प्राण को कहा जाता है और वह प्राण शक्ति जब स्थिर रहती है मानव का जीवन अनुशासन में रहता है।

## प्रलय काल में आत्मा का स्वरूप

यह वाक् मैंने बहुत पुरातन-काल में प्रकट किया था। आज मैं विशेष चर्चाओं में तुम्हें नहीं ले जा रहा हूँ। विचार केवल यह देना चाहता हूँ कि सृष्टि के प्रारम्भ में जब प्रलयकाल आता है तो उन आत्माओं का सबका एक स्वरूप बन जाता है। ऐसा बुद्धिमान कहता

है परन्तु प्रायः ऐसा नहीं है जैसे रजोगुण, तमोगुण, सतोगुण की प्रतिभा तीन गुणाधानम् धारणा को करने वाले एक आत्मा रहते हैं। तीन प्रकार की श्रेणियों वाला यह द्यौ वृति का सम्भूति का यह तीन वृतिका बन जाती है। जब प्रलयकाल आता है तो यह जो मुमुक्षु आत्माएँ होती हैं यह कृतिका में, प्रभु के आनन्द में सत्, चित्, आनन्द में लय हो जाते हैं। यह सत् चित् आनन्द में रहते हैं और मुनिवरो! देखो जो रजोगुण, सतोगुण में है वह प्रलयकाल में कर्म करने की पिपासा के लिए प्रभु से याचना करते हैं कि संसार रचे तो हम कर्म करने के लिए तत्पर हो जाएँ। इस प्रकार की धारणाशक्ति बनी रहती है।

वह परमात्मा के आनन्द में जिसको मोक्ष कहते हैं, वे ही मोक्ष या परमात्मा के आनन्द के साथ रहता है और ये जो रजोगुणी प्रतिभा सतोगुणी प्रतिभा में आत्मा सर्वप्रिय होने वाली कर्म-बन्धना में होने वाले को चित्त का मण्डल जब तक रहता है, वो चित्त के मण्डल में ही उसके सूक्ष्म रूप में आत्मा रमण करती रहती है। मुमुक्षु में इच्छा मण्डप नहीं होता, वह एक रस रहने वाला हैं वह एक रस में गति करता रहता है।

आज यह विचार गम्भीरता के वाक् हमारे प्रारम्भ हो रहे हैं। यह बड़ा गम्भीर विषय है। पुनरुक्ति वाक् आते रहते हैं, परन्तु देखो विचार बड़े गम्भीर और मानवीय क्योंकि हम ऋषि-मुनि विद्यमान हो करके इन वाक्यों के ऊपर गम्भीरता में चिन्तन किया करते हैं। महान्-से-महान् चिन्तन देखो अपने शान्त मुद्रिका में विद्यमान हो करके रत्त हो जाते हैं।

## अनुष्ठान की देन

महाराजा दिलीप जी ने जब धेनु और नन्दनी की सेवा की तो, देवताओं का आह्वान हुआ महाराजा दिलीप! आपका तपोमयी जीवन महान् बन गया है। बारह वर्ष तुम्हारे समाप्त हो गए हैं। बारह वर्ष का महाराजा दिलीप ने यह अनुष्ठान किया था। राष्ट्र को ऊँचा बनाने

के लिए और राष्ट्र में एक निष्काम कर्म करने के लिए कि मैं निष्काम अपने में जितना **मानव तपोमय रहता है, ब्रह्मज्ञान में रहता है, ऋषि-मुनियों के समूह में रहता है उतना उसका अन्तरात्मा प्रसन्न होता है** और ब्रह्मवर्चोसि में उन तत्त्वों में एक महान् परमाणुओं का एक ऊर्ध्वा में जन्म हो जाता है और जीवनशक्ति ऊर्ध्वा बन करके मुनिवरो! देखो उसी को प्राप्त होती है।

मैं विशेष तुम्हें विवेचना देने नहीं आया हूँ। मैं कोई व्याख्याता नहीं हूँ। केवल संक्षिप्त परिचय देने के लिए चला आता हूँ और वह **संक्षिप्त परिचय यह है कि हम परमपिता की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, हम इस संसार सागर से पार हो जाएँ। हम अपने देवत्व को प्राप्त हो करके परमपिता परमात्मा की महती को जान करके अपने में रत्त हो करके यहाँ से जाएँ।**

महाराजा दिलीप जी महाराज ने गऊओं के लिए बड़ा बल दिया है। आज मैं भी बल दे रहा हूँ राष्ट्र के लिए, समाज के लिए। कल समय मिलेगा, तो मेरे प्यारे! महानन्द जी दो वाक्यों की धेनु और नन्दनी के विषय में उनकी कुछ चर्चाएँ होंगीं। आज का विचार समाप्त अब वेदों का पठन-पाठन होगा, इसके पश्चात् यह वार्ता समाप्त।

वेद पाठ .....

पूज्य महानन्दजी—अच्छा भगवन्! आज्ञा।
पूज्यपाद-गुरुदेव—ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः।।

**दिनाँक** : 26 फरवरी, 1985
**समय** : दोपहर 3 बजे
**स्थान** : लाक्षागृह, बरनावा

।। ओ३म् ।।

# रूढ़ि और राष्ट्र-उत्थान

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेद वाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेद वाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महती का वर्णन किया जाता है, क्योंकि उस परमपिता परमात्मा का जो विशाल अनुपम जो विज्ञानमयी स्वरूप है जिसका विज्ञान आयतन माना गया है।

## गम्भीर मुद्रा

प्रत्येक वेद मन्त्र उस परमपिता परमात्मा की महती का वर्णन कर रहा है। जिस भी वेद मन्त्र के ऊपर मानव अपना विचार ले जाता है अथवा चिन्तन करने लगता है उसकी गम्भीर मुद्रा में परणित हो जाता है तो उस मुद्रा में परणित होकर के वह महान् विज्ञानमयी वेत्ता बनकर के वह अपने प्यारे! प्रभु आनन्दमयी स्वरूप को निहारने लगता है। क्योंकि उसका जो ज्ञान है अथवा विज्ञान है वह इतना नितान्तर माना गया है कि उसके ऊपर कोई मानव सीमाबद्ध नहीं हो सका। मानव उसको सीमाबद्ध भी नहीं कर सका है। जब अपनी गम्भीर मुद्रा में मानव परणित हो जाता है तो गम्भीर मुद्रा में परणित होकर के वह प्रायः उसी को प्राप्त हो जाता है। तो इसलिए हमारा वेद का मन्त्र यह कहता है कि प्रत्येक मानव को उस परमपिता परमात्मा के चिन्तन में और मनन में इतना गम्भीर मुद्रित हो जाना चाहिए कि वह अपने

अन्तर्हृदय में उस परमपिता परमात्मा के हृदय में अपने को समावेश कर सके क्योंकि प्रत्येक मानव की एक ही आकांक्षा बनी रहती है कि मैं एक-दूसरे में रत्त होना चाहता हूँ। आत्मा सदैव चिन्तनीय अपने विषय को मानव बनाता रहता है कि मैं उस परमपिता परमात्मा जो जगत का नियन्ता है। जिसका विज्ञान आयतन माना गया है, मैं प्रायः उसमें समावेश हो जाऊँ और मैं उसी को प्राप्त करके अपनी मानवीयता को मननशील बनाता हुआ इस संसार को निहारता हुआ और परमपिता परमात्मा का यह ब्रह्माण्ड उसका आयतन मैं स्वीकार कर लूँ। तो यह उसका गम्भीर मुद्रा में जाने का परिणाम जाने का उसका मन्तव्य बना रहता है और यह विचारता रहता है कि मैं अपने में ही अपनी वातावर्णीय अक्षत्मम् मैं उसमें समाहित हो जाऊँ।

मेरे प्यारे! कई समय से हम महाराजा दिलीप जी के जीवन का जो दिग्दर्शन प्रायः हमारे समीप आता रहा है। उनकी राष्ट्रीयता को भी दृष्टिपात करने का तो सौभाग्य प्राप्त होता रहा है। उससे यह प्रतीत होता है कि उनके जीवन का महान आदर्श रहा है जिस आदर्शता को हम सदैव वर्णन करते रहते हैं। वेद का मन्त्र कहता रहता है, क्योंकि संसार में निष्काम कर्म जितना भी है मानव को एक महान् वेदी पर ले जाता है। मानव को एक पवित्रता की आभा में रमण करा देता है। तो इसलिए मेरे पुत्रो! हमें यह विचारना है कि हम अपने में कितने विचारशील बन करके और महानता की वेदी पर अपने को ले जाना चाहते हैं। मेरे प्यारे! महानन्द जी अपने दो शब्द उच्चारण कर सकेंगे क्योंकि इनकी सदैव उत्कट इच्छा रहती है। कि मैं दो शब्द उच्चारण करूँ।

## पूज्य महर्षि महानन्द मुनि जी के उद्‌गार

ओ३म् यश्चाम् दिव्याम् गोवर्णा सम्भवनश्चतम् त्वचासंधना।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव, मेरे भद्र ऋषि मण्डल और भद्र समाज! आज मेरे पूज्यपाद गुरुदेव एक बड़ी गम्भीर मुद्रा की चर्चा कर रहे थे क्योंकि

परम्परागतों से ही प्रायः एक-एक वेद मन्त्र को ले करके अपनी मुद्रा में मुद्रित रहे हैं। आज मैं उस मुद्रा की चर्चा तो नहीं करने आया हूँ केवल यह उच्चारण करने के लिए आया हूँ कि मेरे पूज्यपाद गुरुदेव गौमेध और कामधेनू और धेनु की चर्चा कर रहे हैं। कई समय से हम चरणों में विद्यमान हो करके कहीं एक धेनु की चर्चा करते हैं तो कहीं एक गौ की चर्चा कर रहे हैं। कहीं नन्दनी की चर्चा कर रहे हैं। हमारे यहाँ परम्परागतों में जो राष्ट्रीयवाद की चर्चाएँ जब हमारे समीप आती रहती हैं, तो प्रायः हमें ऐसा प्रतीत होता है हम आधुनिक काल वर्तमान की और बहुत पूर्वाकाल की जब हम अतीत का विचार लेने लगते हैं तो प्रायः मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यह कहा करता हूँ कि वह विचार बहुत दूरी चला गया है और वर्तमान का विचार बहुत दूरी को चला गया है। परन्तु मैं आज दूरी को मापने के लिए नहीं आया हूँ। केवल पूज्यपाद गुरुदेव को यह वर्णन कराने के लिए आया हूँ कि यह जो कामधेनू की चर्चाएँ पूज्यपाद गुरुदेव करते रहते हैं। एक तो कामधेनू वह थी जो वशिष्ठ मुनि के आश्रम में रहती थी। जिससे महाराजा विश्वामित्र को ब्रह्मर्षि होना हुआ। एक कामधेनू महाराजा दिलीप जी के यहाँ थी।

## महाराजा दिलीप का ऊर्ध्वा जीवन

एक समय महाराजा दिलीप जी जब राष्ट्र के अयोध्या में राष्ट्रीयता को ऊर्ध्वा में बनाने लगे, तो एक समय त्रिपुरी में पहुँचे। एक राजाओं का समूह एकत्रित हुआ था किसी काल में और उन्होंने गौ के ऊपर, नन्दनी के ऊपर चर्चाएँ कीं। परन्तु कामधेनू गौ देवताओं की सभा से महाराजा इन्द्र को प्राप्त हुई और इन्द्र ने वही कामधेनू महाराजा दिलीप जी को प्रदान कर दी थी। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव सब कुछ जानते ही हैं। इस सम्बन्ध में उसी कामधेनू की उन्होंने सेवा की। उसी नन्दनी की सेवा की, तो कामधेनू नन्दनी के दो स्वरूप बने। परन्तु एक स्वरूप को कामधेनू कहते हैं, जो कामनाओं की पूर्ति करने वाली

हो। प्रत्येक इन्द्रियों के ऊपर महाराजा दिलीप जी ने संयम किया और इन्द्रियों पर संयम करते हुए एक पशु के पश्चात् ऋषि-मुनियों के आश्रम में प्रायः गति करते रहे और देखो उनके पगों में पगबद्धता भी नहीं थी। परन्तु देखो उसके पीछे भ्रमण करते रहते हैं ऋषि-मुनियों से ब्रह्मज्ञान, ऋषि-मुनियों से पवित्रता की आभा को लेकर के उन्होंने ब्रह्मज्ञान को प्राप्त किया। क्योंकि ब्रह्मज्ञान एक ऐसा ज्ञान है, ब्रह्म की चर्चा ऐसी चर्चा है जिससे मानव का अन्तरात्मा प्रसन्न रहता है। मानव का अन्तरात्मा जब प्रसन्न रहता है तो उसकी उग्रगति होने लगती है। ऊर्ध्वागति बनने लगती है और परमाणुवाद की जब ऊर्ध्वागति बनने लगती है तो मानव अपने में प्रसन्नीय बन जाता है।

## पुरातन राष्ट्र और आधुनिक जगत

जहाँ मैं उन राजाओं के प्रति इस प्रकार अपने विचार व्यक्त करता रहता हूँ परन्तु आधुनिक काल जहाँ वर्तमान में हमारी यह वाणी प्रवेश कर रही है, वाणी वर्तमान में गति कर रही है, जब मैं आधुनिक काल के राजाओं के ऊपर उस राष्ट्रीयता में सन्तुलन करता हूँ तो बहुत दूरी चला जाता हूँ।' उस काल का राजा सिंहराज भी उससे नम्रता से हिंसा की प्रवृत्ति को त्यागकर के अहिंसा की प्रवृत्ति में परणित हो जाता है। आधुनिक काल का विचार, वर्तमान के राष्ट्रवाद के ऊपर जब मैं विचार करता हूँ जब राजा के राष्ट्र में हिंसक समाज बन जाता है तो उस राजा का आत्मबल नष्ट हो जाता है। मैंने बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कहा था महाराजा दिलीप जी का इतना ऊँचा आत्मबल कि सिंहराज भी नन्दनी को त्यागकर के राजा के चरणों की वन्दना कर रहा है। आधुनिक काल में जब वर्तमान में प्रजा में कितना अहिंसा परमोधर्म है। जितने प्राणी प्रभु ने निहित किए उनके ऊपर इतना अधिपत्य समाज का रहता है, बुद्धिजीवी प्राणियों का रहता है जो परमात्मा ने यह योनियाँ, अपने कर्मों के भोगवाद के लिए बनाई हैं, किसी-न-किसी प्रकार लाभप्रद हैं। यह समाज के लिए लाभप्रद हैं,

वायुमण्डल के लिए लाभप्रद हैं। परन्तु इस प्रकार की विचारधारा प्रजा और राजा में दोनों में होती है तो वह राष्ट्र क्यों न ऊँचा बनेगा। उस राष्ट्र में रूढ़ियाँ क्यों रहने लगी हैं।

परन्तु जहाँ वेद के पठन-पाठन करने वाले आचार्य के चरणों में मृगराज भी और सर्पराज भी उनकी वार्ता को शान्त मुद्रित हो करके ध्यानावस्थित हो जाते हों तो कितना उसमें आत्मबल है वह कितना आत्मविश्वासी है! हिंसक उनके यहाँ अहिंसा का पालन कर रहा है और हिंसा को त्याग रहा है। इसी प्रकार जब राजा के राष्ट्र की प्रजा और बुद्धि-जीवी प्राणी बन जाता है तो उन राष्ट्र में मानवता की एक आभा परणित हो जाती है। परन्तु जब मैं अतीत की वार्ता को त्यागता हूँ और वर्तमान के काल को लेता हूँ तो मैं बहुत दुःखी इस जगत में चला जाता हूँ और विचारता रहता हूँ हे प्रभु! यह क्या तेरे राष्ट्र में खिलवाड़ हो रहा है? एक रूढ़ि तो कहता कि हिंसा मत करो। एक रूढ़ि कहता हिंसा नहीं करेंगे तो हमारा जीवन कैसे पनपेगा। परन्तु देखो इस प्रकार की जब राजा के राष्ट्र में प्रजा हो जाती है तो हे राजन्! तेरा आत्मबल कदापि ऊँचा नहीं बनेगा। तेरे राष्ट्र में बुद्धिमान जीव पनप नहीं सकेगा। तेरे राष्ट्र में विचारना है यदि तुझे अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाना है और द्वितीय राष्ट्र की हिंसा प्रवृत्तियों को नष्ट करना है तो तुझे अहिंसा परमोधर्मः का पालन करना होगा और प्रजा उसके अनुकूल व्रत करके नाना प्रकार की रूढ़ियों को शान्त करना होगा। जब तक यह नाना प्रकार की रूढ़ियाँ शान्त नहीं होंगीं, एक स्थलियों में मानो देखो द्रव्य के द्वारा जहाँ माँस का निर्यात राजा के राष्ट्र में होता हो, राजा का राष्ट्र कैसे पनप सकता है? उसके पनपने का आसार नहीं बन पा रहा है।

मेरे विचार में नहीं आ रहा है मैं पूज्यपाद गुरुदेव को क्या परिचय दूँ आधुनिक जगत का। जब मैं रूढ़िवादों में प्रवेश करता हूँ तो एक रूढ़ि नहीं, दो रूढ़ि नहीं रूढ़ि में से रूढ़ि का जन्म हो रहा है और वह रूढ़ि देखो राष्ट्र की घातक बन रही है। वह धर्म की घातक नहीं है, परमात्मा की

घातक नहीं है, दर्शनों की घातक नहीं, तो राष्ट्र के लिए घातक बनकर रह गई है। वो जब राष्ट्र के लिए घातक बनी हुई हैं जो रूढ़ियाँ वो रूढ़ियाँ कहती हैं यदि गौ-माँस नहीं हो तो हमारा जो शरीर है वो पनप नहीं सकेगा। एक कहता है यह पाप है, एक मानव देखो पाप कहकर भी उसको पान कर रहा है, कैसा विचित्र जगत् बन गया है। मानव वाणी से वाक्य कह रहा है और शान्त मुद्रा में कहीं उसे पान कर रहा है। इस प्रकार का यह जगत्, इस प्रकार का यह राष्ट्र बनता जा रहा है।

वैसे वास्तव में तो मेरे विचार में यह आ रहा है कि समय आने वाला है जब राष्ट्र में कोई-न-कोई महानता का दर्शन हो सकता है। मैं उसको निश्चय नहीं कह रहा हूँ, परन्तु देखो मैं एक अस्वत कृतियों में अपने को ले जा रहा हूँ। जहाँ देखो मुझे स्मरण है इस महाभारत काल के पश्चात् नाना प्रकार की रूढ़ियाँ आईं और रूढ़ियों में ऐसे जो रूढ़िवादियों के विशेषज्ञ जिन्होंने रूढ़ि की स्थापना की, प्रायः सभी गऊओं की, गऊ नाम के पशुओं की देखो वह सेवा करते चले आए हैं। जब मैं यहाँ नाना रूढ़ियों के मोहम्मद से पूर्व राष्ट्रों में जो रूढ़ियाँ थीं, उन रूढ़ियों के जो प्रवर्तक थे, जो गऊओं के पद चिन्हों को अपने में जलों से स्पर्श करके उसे पान करते रहे, तो हृदय प्रसन्न होता रहा है। परन्तु जब मैं आधुनिक काल में प्रवेश करता हूँ उनके प्रवर्तकों की चर्चा करता हूँ, वे गौ अपने उदर की एक स्थली बनाए रहते हैं। कई मोहम्मद के मानने वाले हैं उनके हृदयों में वह यह कहते हैं कि माँस हमें प्राप्त नहीं होगा तो हम जीवित ही नहीं रह सकेंगे।

परन्तु हे भोले प्राणियों विचार-विनिमय करो। विचारने की तुम्हारे हृदय में शक्ति रहनी चाहिए कि परमात्मा को सदैव को स्वीकार नहीं करते हैं। वह तो केवल राष्ट्र तक उनका समाज चला हुआ है यदि उनमें यौगिकता का हम एक खोज करने लगें तो यौगिकता हमें प्राप्त नहीं होती। उनमें यौगिकता चरित्रता का अभाव होता चला जा रहा है। जब यह अभाव हो रहा है तो वो राष्ट्रीयता के शत्रु बन करके स्वार्थवाद

की वेदी पर विद्यमान हो रहे हैं। प्रत्येक मानव के एक रूढ़ि नहीं है, मैं उन्हीं की रूढ़ियों को नहीं कह रहा हूँ जितनी भी रूढ़ि हैं, मैं तो यह चाहता हूँ कि राष्ट्र और प्रजा दोनों मिल करके दोनों एक ही स्थली पर आ करके इन रूढ़ियों को समाप्त कर देना चाहिए। जब तक रूढ़ि समाप्त नहीं होगी तब तक हम यथार्थ राष्ट्र की स्थापना नहीं कर सकते। क्योंकि यथार्थ राष्ट्र उस काल में बनता है जबकि मानव के द्वारा एकाकी विचार होता है।

एकाकी धर्म की विस्तृत विवेचना होती है, उसकी व्याख्या विशेष होती है, तो उस काल में उसकी प्रतिभा ऊँची बनती है। तो आज मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यह परिचय दे रहा हूँ कि प्रत्येक मानव को अपने राष्ट्र और मानवता की रक्षा करनी है जिससे मानवीयत्व अपने में सदैव तत्पर रहे, अपने में रत्त होकर अपनी आभा में परणित हो करके, मानवीयता का दिग्दर्शन होता रहे। जिससे मानवता उसकी आभा में परणित हो जाए। पूज्यपाद गुरुदेव को मैंने कई काल में वर्णन करते हुए कहा था। आज का हमारा पुनः से प्रवेश जिसकी यागों की चर्चाएँ मैं पुनः-पुनः करता रहता हूँ, अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कई काल में जब मैं विद्यालयों में प्रवेश करता हूँ तो विद्यालयों में भी आहार और व्यवहार दोनों में सूक्ष्मता आ गई है।

## शिक्षा प्रणाली की पवित्र आचार सँहिता बनाने की प्रेरणा

हे राजन्! यदि राष्ट्र को ऊँचा बनाना है तो तेरी शिक्षा प्रणाली, तेरी जो आचार्य प्रणाली है उसकी आचार सँहिता बनानी होगी और उसकी आचार सँहिता बना करके, अपने राष्ट्र को ऊँचा आदर्श बनाना होगा। भगवान् मनु ने राष्ट्र का निर्माण किया है, मनु वाली पद्धति नहीं आएगी तो तेरा राष्ट्र अतीत की भाँति नहीं बन सकेगा। वर्तमान काल में महाभारत के काल के पश्चात् यह जो धर्मों के नामों पर मानव, मानव का शत्रु बना हुआ है। यह उस काल में नष्ट होगा जबकि तेरे राष्ट्रवाद

में, समाज में इन धर्म के विचारकों की रूढ़ियों का शास्त्रार्थ होगा। यह अपनी-अपनी निश्चित अन्तिम चरण में जाने के पश्चात् वह विचार जो अन्तरात्मा में, जो सिद्धान्त है वह तेरे राष्ट्र में आ जाएँ, वह सिद्धान्त प्रजा उसको स्वीकार करके देखो राष्ट्र, दोनों ऊँचे बन सकते हैं।

विचार-विनिमय क्या? मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह वाक् उच्चारण करने के लिए आया हूँ, यह परिचय देने के लिए आया हूँ। आधुनिक काल को देखो यहाँ शिक्षा प्रणाली की जो आचार सँहिता है वह पवित्र होनी चाहिए। तेरी जो राष्ट्रीय सँहिता है वह अशुद्धवाद में परणित है, वह भी पवित्र होनी चाहिए। परन्तु आचार सँहिता को हमें ऊँचा बनाने के लिए पवित्रता की वेदी पर ले जाना है, आचार सँहिता को बनाने के लिए हमें विज्ञान को ऊँचा बनाना है।

आधुनिक काल का जो विज्ञान है, मैंने विज्ञान की चर्चाएँ बहुत पुरातल काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव को निर्णय कराई थीं और यह कहा था कि आधुनिक काल का जो विज्ञान है, विज्ञान की जो सँहिताएँ हैं वह एक द्वितीय मार्ग को अपना गई हैं। देखो यहाँ विज्ञान की चित्रावलियों का दुरुपयोग हो रहा है, जो राजा रावण के काल में हुआ था। राजा रावण के काल में भी चित्रावलियों का दुरुपयोग हुआ था। आधुनिक काल में भी प्रायः ऐसा हो रहा है। वर्तमान काल में भी इसी प्रकार आचार सँहिता, विज्ञान की समाप्ति होती जा रही है। अणु और परमाणुओं का निर्माण हो रहा है परन्तु देखो उसके जीवन के लिए वह शक्ति मानव के द्वारा नहीं हुई है। जहाँ आग्नेयास्त्रों का निर्माण हो गया है वहाँ वरुणास्त्रों का निर्माण नहीं हुआ। कहाँ जा रहा है विज्ञान आधुनिक काल का? मैंने बहुत पुरातन काल में यह वाक्य अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कहा था।

## लाक्षागृह का इतिहास

समय आता रहा। देखो महाभारत काल की जिस स्थली पर

हमारी यह आकाशवाणी जा रही है यही स्थली मानो देखो नदी तट पर नदी के प्रवाह में बहुत ही समाप्त हो गई। यह भूमि नदी के प्रवाह में समाप्त हो गई है, नदी के क्रियाओं में चली गई। परन्तु समय था जब एक-एक योजन दूरी तक यहाँ बहुत से विद्यालयों का बहुत-सी विज्ञान की देखो यहाँ अचार सँहिताएँ थीं। एक आचार सँहिता यहाँ घटोत्कच द्वारा निर्माणित हुई थी जिसमें महाराज बर्बरीक, महाराजा अर्जुन, भगवान् कृष्ण और देखो यहाँ गुरु द्रोणाचार्य विद्यमान हो करके एक आचार सँहिता बनी थी।

## चन्द्रमा और पृथ्वी की कक्ष सीमा में यन्त्र स्थिर है

यहाँ हिमालय के पार से एक वैज्ञानिक आया था उस काल में जिसका नाम **भुवोवाचिक** था और भुवोवाचिक ने यहाँ आकर के एक वेद मन्त्र को ले करके एक पातालपुरी से एक वैज्ञानिक आया था, वे आकर के देखो यहाँ एक आचार सँहिता बनी। एक यन्त्र का निर्माण हुआ था, वह यन्त्र धातुओं को मिश्रण करके धातुओं का वृणीत करते हुए एक समुद्र के उत्तरी ध्रुव के आँगन में उसके ऊर्ध्व भाग में एक यन्त्र का निर्माण किया गया था जिस यन्त्र की यह विशेषता थी कि कोई भी धातु का यन्त्र यदि पृथ्वी के जलों का, पृथ्वी के वृणियों का कोई भी यन्त्र उसमें प्रवेश हो जाए और प्रवेश होकर जहाँ उसकी छाया आ जाए, तो सर्वत्रता को उसकी छाया उसको निगल जाती है। जब निगल जाती थी तो वह यन्त्र महाराजा बर्बरीक के द्वारा महाभारत के काल में रहा। जब महाभारत के काल में वह यन्त्र रहा, वह यन्त्र उन्होंने देखो अन्तरिक्ष में जहाँ चन्द्रमा और पृथ्वी के कक्ष की सीमा थी, कृतिका लगती है वहाँ उन्होंने यन्त्र को स्थिर कर दिया और स्थिर करके देखो उसकी आयु है दस हजार पचास वर्ष सात माह और पाँच दिवस का उसका आयु कहलाता है। यन्त्र आज भी विद्यमान है, उसकी छाया वर्तमान के समुद्रों के तटों पर आती रहती है और उसकी छाया जब आती है जो उसकी छाया में आता है, उसका विध्वंस कर देता है और

उसका एक अंकुर भी प्राप्त नहीं होता। चाहे वो वायुयान हो, चाहे वह जलयान हो। कोई भी यान हो परन्तु देखो वह नष्ट हो जाता है। प्राणी भी प्राप्त नहीं होता।

आधुनिक काल का विज्ञान अपनी स्थलियों पर विद्यमान हो करके यह विचारता रहता है कि यह क्या कोई देव है? कोई तो वैज्ञानिक उसे देव कहता है। एक वैज्ञानिक ने यह कहा कि हमारे वर्तमान के जो वैज्ञानिक हैं उनका यन्त्र है। परन्तु कोई कुछ कह रहा है, अपने में निर्णय नहीं कर सके हैं हम इस वाक्य का। तो मैं पूज्यपाद गुरुदेव को ये निर्णय दे रहा हूँ कि आधुनिक काल के विज्ञान की जो सँहिता है, आचार सँहिता उसकी प्रणाली इतनी भी विचार और महानता में नहीं पहुँची है जो पुरातन के विज्ञान को अपने विज्ञान में मापने वाला बन जाए। मापा नहीं जा रहा है। आधुनिक काल के यन्त्रों का आयु केवल सौ-सौ वर्षों का ही बना है। परन्तु पुरातन के लाखों-लाखों वर्ष के यन्त्रों की आयु बना करके वह स्थिर हो रहा है और गति कर रहा है। कोई चन्द्रमा की गति कर रहा है। कोई सूर्य की किरणों में रमण हो रहा है। परन्तु देखो वह गति करने वाला यन्त्र है। जब मैं यह विचारता रहता हूँ कि आधुनिक जगत इस प्रकार के विज्ञान में भी अपनी आचार सँहिता को निर्माणित नहीं कर सका है। उसमें भी वह अधूरेपन में यह दृष्टिपात आता रहा है। जब देखो इस नाना प्रकार की रूढ़ियों में वैदिकता को त्यागने वाले वेद का वाक्य तो प्रायः सभी जगह है परन्तु सभी स्थलियों पर जब मैं वेद के निदनीय प्राणियों के ऊपर प्रवेश करता हूँ, निरीक्षण करने लगता हूँ तो मुझे आश्चर्य होने लगता है। उसमें मैं आश्चर्यचकित होकर के रूढ़ियों को धिक्कारता हूँ।

## आत्मविश्वास की महत्ता

हे राजन्! तू जब तक अपने राष्ट्र से रूढ़ियों को समाप्त नहीं करेगा, तब तक तेरे यहाँ न तो विज्ञान सँहिता और न आचार सँहिता

बन सकती है, न धर्म की आचार सँहिता बन सकती है। मानवता की आचार सँहिता नहीं बन पाई। तो इसलिए मेरे विचार में तो केवल यही उच्चारण करने के लिए आता हूँ। **देखो मेरा राष्ट्रवाद जब ऊँचा बनेगा तब मानव को आत्मविश्वास हो जाएगा।** आधुनिक काल में आत्मविश्वास नहीं रहा है, न राष्ट्र को रहा है, न प्रजा को रहा है, न हिंसक प्राणियों को रहा है, न अहिंसा परमोधर्मः वालों को रहा है। जब आत्मविश्वास नहीं रहा है, स्वार्थवाद रह गया है। यह स्वार्थवाद कुछ समय के पश्चात् नष्ट होता रहता है, कहीं नष्ट हो जाएगा।

## पुनः से आचार सँहिता बने

मैं कोई विशेष परिचय देने नहीं आया हूँ केवल मैं इतना ही परिचय देना चाहता हूँ–हे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! आधुनिक जगत् यह बड़ा विचित्र बन रहा है। जिस स्थली पर हमारी आकाशवाणी जा रही है, मैं इस भूमि को दृष्टिपात करके मेरा अन्तरात्मा बड़ा प्रसन्न होता है। क्योंकि देखो, जहाँ-जहाँ क्या होता था जहाँ-जहाँ वैज्ञानिक विद्यमान होकर के याग करते थे, अचार सँहिता का निर्माण करते थे, परन्तु देखो कुछ काल आया रूढ़िवादियों ने मानव की आचार सँहिता के परमाणुओं को निगल दिया। वह दूर चले गए और पुनः से आचार सँहिता बने तो मेरा अन्तरात्मा पुनः प्रसन्न हो।

## महाराजा अर्जुन का जीवन

परन्तु देखो यहाँ महापुरुषों की प्रतिभा में घटोत्कच जैसे वैज्ञानिक, बर्बरीक जैसे वैज्ञानिक, भीम जैसे और अर्जुन जैसे वैज्ञानिक अपने में रत्त रहे हैं। कुछ प्राकृतिक प्राणी ये कहते हैं कि क्या महाराजा अर्जुन कामासुरों में रत्त रहते थे। परन्तु इन भोले प्राणियों को प्रतीत नहीं है। उनका कथन है आधुनिक जगत् के कहीं अलोपी के द्वारा उन्होंने संस्कार किया, कहीं द्रौपदी के द्वारा किया। भिन्न-भिन्न प्रकार के इस प्रकार का नहीं अलोपी के संस्कार केवल इसलिए कि उस काल की परम्पराएँ इस प्रकार 'दानाम्

प्रभु सम्भवः देवभ्रा' उस काल में दान की प्रवृत्तियाँ गति करती रहती थीं। देवियाँ–इस प्रकार का उनका आचार बना हुआ था कि वह वीर्यत्व को लेकर के वीर्यत्व को जन्म देना उनका एक क्रियाकलाप बना हुआ था। उस काल में अपने में सुसज्जित रहना, ब्रह्मचर्य व्रत से रहना–अलोपी ने एक सन्तान को जन्म दिया था, उसके पश्चात् वह ब्रह्मचर्य वस्त्रों से पालना करती रही। इसी प्रकार आधुनिक काल से वह काल कई-कई मार्गों में ऊँचा था। कई मार्गों में वह सामान्य कहलाता था परन्तु देखो इस प्रकार महारानी द्रौपदी का भी इस प्रकार की आचार सँहिता उसके जीवन की आती रहती है। उनकी आचार सँहिता भी इसी प्रकार की बनी रही और उनका जीवन एक महान् और मार्मिक बना रहा।

जिसके ऊपर हम सदैव हर्ष ध्वनियाँ करते रहते हैं और विचारते रहते हैं कि आचार सँहिता कितनी पवित्र और विज्ञानमय, क्योंकि वे (अर्जुन) यहाँ की ममता को त्याग करके महाराजा शिव के द्वारा हिमालय में उन्होंने यन्त्रों का निर्माण किया और अर्जुन ने यहाँ तक वह अपने यन्त्र के द्वारा देखो मंगल मण्डल में रहकर के विज्ञान की प्रतिभा को प्राप्त कर रहा है। वहाँ देखो बर्बरीक भी उस यन्त्र को लेकर के उसने भी जाने का प्रयास किया। महाराजा घटोत्कच चन्द्रमा की यात्रा में चन्द्रमा में गति करते रहे, हर छः माह में चन्द्रमा चले जाते।

## आदर्शवादी विज्ञान

देखो त्रेता का काल महाविचित्र रहा है। द्वापर का काल इतना विचित्र रहा है। विज्ञान में भी अग्रणीय रहा है। इसी प्रकार पातालपुरी क्या हिमालय की कृतिका, क्या सब राजाओं के वैज्ञानिक एकत्रित होकर के अपनी एक आचार सँहिता बनाते थे। आज के विज्ञान का भी ये विचार रहा है कि हम एक आचार सँहिता बनाएँ। हम एक विज्ञान की आचार सँहिता बना करके और मानव आदर्शवादी विज्ञान को बनाएँ। ऐसा विचारते रहते हैं, परन्तु ये जो राष्ट्रवाद है, नाना

रूढ़ियाँ, ये नहीं होने देतीं। ये दूरी कर देती हैं। प्रायः नाना प्रकार की रूढ़ियों से मानव को, राष्ट्र को पार होना है।

मैं कई समय से कहता चला आ रहा हूँ, मेरा ये मन्तव्य रहता है कि मेरे हृदय में वह कल्पना बनी रहती है। ऋषि-मुनियों की यहाँ जैमिनी जैसे महापुरुष, जहाँ गौतम जैसे अपने वेदों की ऋचाओं में रत्त रहे हैं, एक-एक सूत्र पर एक-एक पोथी का निर्माण होता रहा है। वेद का एक मन्त्र है उसी मन्त्र के ऊपर एक पोथी का निर्माण है। कहीं कणाद् लेखनीबद्ध कर रहा है, कहीं गौतम कर रहा है, कहीं जैमिनी कर रहा है, कहीं व्यास कर रहा है, कहीं नाना ऋषि अपने में लेखनीबद्ध कर रहे हैं और वैज्ञानिक अपनी लेखनियों को बद्ध करके विज्ञान के युग में प्रवेश कर रहे हैं।

## आत्मविश्वास की आवश्यकता

आज जब मैं विचारता रहता हूँ, मैं जब ये आधुनिक जगत् के विज्ञान का दृश्य देखता हूँ तो मैं दूर चला जाता हूँ, राष्ट्र को लेता हूँ तो दूर चला जाता हूँ। तो इसलिए मेरा तो एक ही कथन है, मैं विशेष चर्चा को प्रकट नहीं करूँगा—राजा के राष्ट्र में राजा जो गऊओं की रक्षा करता है, जो जिसका आत्मविश्वास हो जाएगा तो गऊओं की, नन्दनी की महाराजा दिलीप की भाँति उनकी सेवा कर सकता है, जो निर्भय हो जाता है। जिसका आत्मबल देखो बलि पर रह जाता है और जब आत्मबल नहीं रहता राजा के अन्तर्हृदय में तू वहाँ चला जाएगा, तो मेरी मृत्यु हो जाएगी, वहाँ चला गया, मेरी मृत्यु हो जाएगी। अरे भोले प्राणी, शरीर के विच्छेदों से तुम क्यों इतने, तुम कितने त्रसित हो रहे हो, इस शरीर का निर्माण हुआ है तो इसका विच्छेद भी होना है। ये अपने विचार में आत्मविश्वास बना करके और यहाँ योग की प्रतिभा को लेकर के चलो। तुम्हारा ब्रह्मचर्य जब तुम्हारा गतिशील और विशेष होता है।

यह ब्रह्मचर्य जो ब्रह्म से उसका तारतम्य बना रहता है, समाज का निष्पक्ष होकर के क्रियाकलाप करता है और मृत्यु का, अन्धकार का उसे भय नहीं रहता। अन्धकारी प्राणी को होता है, इसके द्वारा ब्रह्मचर्य की निन्दा हो जाती है, जिसके द्वारा ब्रह्मचर्यता भी नहीं रह पाती। वह सदैव मृत्यु के अप्रिय अन्धकार में चला जाता है। अन्धकारी राजा नहीं होना चाहिए।

**ब्रह्मवेत्ताओं को अन्धकारी राजाओं को सदैव समय-समय पर अपनी घोषणा करनी चाहिए। अपना घोष कहना चाहिए।** राजन्, तुम मृत्यु से भयभीत न हो, यह मृत्यु तो तेरा आभूषण है, मृत्यु तेरा अन्धकार। इस अभाव को अपने से अभागे मानो तू इसको अपने में नष्ट करता हुआ उस चेतना को पाने का प्रयास कर जहाँ पशुओं की, पक्षी की मछली से लेकर के गऊओं तक की रक्षा करने वाला होगा तो तुझे भय नहीं दृष्टिपात रहे। परन्तु देखो रहा यह वाक्य, आज का मानव यह कहता है कि क्या राष्ट्र में क्रियाकलाप बने? परन्तु मैं यह कहता हूँ आत्मविश्वास हो, आत्मविश्वास से ये क्रिया बनेगी, आत्मविश्वास से आत्म-वैज्ञानिक उत्पन्न होंगे, आत्मविश्वास से यहाँ वैज्ञानिकों का जन्म होगा।

**वैज्ञानिक कौन होता है?** वैज्ञानिक जो वायुमण्डल में से तत्त्वों को तत्वित करके तत्त्वों का निर्माण करता है पृथ्वी के खनिजों को न नष्ट करने वाला विज्ञान को ऊर्ध्वागति में ले जाता है। वह विज्ञान ऊँचा होता है जो देह की अग्नि के पोषक तत्त्वों से ले करके वायुमण्डल में से परमाणुओं को एकत्रित करके उसके यन्त्रों का निर्माण करता है और वह वाहन गति करता रहता है। इस प्रकार मैंने बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव को निर्णय देते हुए कहा है, आत्मविश्वास की, आत्मतत्त्व की, ब्रह्मज्ञान की आवश्यकता है। जो दूसरों के शृंगार को धारण करके अपने उदर की पूर्ति करना चाहता है वह आत्मविश्वासी नहीं बन सकता।

## महाराजा अश्वपति का जीवन

जब मैंने बहुत पुरातन काल में ये वाक्य कहा था। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा जब कई समय राष्ट्रों में पहुँचा, मैं एक समय महाराजा अश्वपति गन्धर्वा के देखो राष्ट्र में पहुँचा, पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा तो जब वहाँ यह वाक्य आया कि महाराजा आए हैं तो भगवन् मेरे आसन को पवित्र कीजिए, कुछ पान कीजिए जिससे मेरा गृह पवित्र बन जाए। तो पूज्यपाद गुरुदेव, मैं और एक बटुक ऋषि से जब उन्होंने कहा तो उत्तर दिया राजन्! तेरे राष्ट्र का अन्न ग्रहण नहीं करेंगे क्योंकि राष्ट्र का जो अन्न होता है वह दूषित होता है, हमारी बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है। परन्तु देखो जब इस प्रकार कहा तो राजा और उनकी पत्नी ने ऋषि के चरणों को धो करके यह कहा कि प्रभु, आओ भगवन्! हम स्वयं कला, कौशल करके उद्यम करते हैं, उसके बदले जो प्रतीत वसुन्धरा हमें जो अन्न देती है उसको पान करते हैं और राष्ट्र का हम क्रियाकलाप करते हैं। मुझे ऐसा स्मरण है कि आज हम उस राष्ट्र सभा में विद्यमान हों तो पूज्यपाद गुरुदेव त्यागियों ने, ऋषि-मुनियों ने शोक संस्थान ग्रहण किया और ग्रहण करके वह प्रसन्नता को प्राप्त हो गए।

## आधुनिक ऋषि समाज

आधुनिक काल का जो ऋषि मण्डल बना हुआ है उसको मैं आचार-सँहिता और विचित्र जगत में ले जाऊँगा। परन्तु आधुनिक काल के साधु को यदि कोई राष्ट्र अन्न को दे देता है तो बड़ा प्रसन्न होता है, अरे ये साधु-महात्मा तो बड़ा महान है। इनके तो राजा भी स्वागत करते हैं, नेताजन भी स्वागत करते हैं।

परन्तु देखो वह महापुरुष जो राजा को यह कहता है कि मैं तेरे राष्ट्र का अन्न ग्रहण नहीं करूँगा, वह महापुरुष है। परन्तु जो यह कहता है इसकी सेवा तो नेता कर रहे हैं, अरे नेता के रूप को जो नहीं जानता वे दोनों ही अपनी नौका में विद्यमान हो रहे हैं। इसलिए

यह ब्रह्मज्ञान का ह्रास आधुनिक काल में दृष्टिपात कर रहा हूँ। इसलिए ये रूढ़ियाँ बनती चली जा रही हैं। राजा यह विचार, कि इस साधु में कौन-से गुण हैं, यह कृति कर रहा है, किस भोग में लगा हुआ है। तो इसी ध्येय को साधु समाज, ऋषि समाज जब पवित्र बन जाएगा तो राष्ट्र-राष्ट्र में ब्रह्मज्ञान की प्रतिभा का जन्म हो जाएगा।

## ऋषि-मुनियों की देन

आज मैं देखो विशेष चर्चा न देता हुआ, इन रूढ़ियों के प्रति मेरा अन्तर्हृदय यह कहता है कि राजा को चाहिए इन रूढ़ियों को, सबको समाप्त कर देना चाहिए। एक केवल देखो वेद का प्रकाश रहना चाहिए। इस प्रकाश की प्रतिभा के नीचे करके सूर्योदय होता है, विचार उदय होता है जहाँ आकार और विद्या की प्रतिभा का जन्म होकर के ब्रह्मचरिष्यामी बनता है। तो आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ केवल यह विचार देने आया हूँ पूज्यपाद गुरुदेव को कि राजा अश्वपति के द्वारा ऋषि-मुनियों के चरणों की वन्दना की, उन्होंने कुछ आहार किया और उपदेश देकर के ऋषि कहते थे कि हे राजन्! हम इसलिए आए हैं कि जहाँ अन्न ग्रहण किया है इस अन्न के बदले तुम्हें कुछ दे जाएँ और देना यह है कि तुम्हारी आचार सँहिता पवित्र होनी चाहिए, तुम्हारा मानव क्रियाकलाप ऊँचा हो, जिससे तुम्हारा अनुसरण करने वाली प्रजा महान बनकर के तुम्हारे जीवन को ऊँचा बनाए।

आज मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह परिचय देने के लिए आया हूँ कि समाज को बनाना है तो राष्ट्र को ऊँचा बनाना होगा, हिंसा में अहिंसा को विचारना होगा और मानव को ब्रह्मज्ञान की प्रतिभा में रत्त होकर के निःस्वार्थ होकर के क्रियाकलाप करना होगा। निःस्वार्थ राजा बन जाए, साधना करने वाला साधु बन जाए, कोई भी बन जाए परन्तु इस समाज को कुछ-न-कुछ दे करके अपने जीवन में चला जाता है और जिसकी आचार्य सँहिता पवित्र नहीं है वे किसी भी आश्रम में निःस्वार्थ

नहीं हैं तो वे स्वार्थवाद में परणित हो रहा है। ऐसे समाज मानव गंदे गछेड़े में परणित करके, नष्ट हो जाते हैं।

आज का विचार-विनिमय मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा कामना की प्रभु मुझे तो इसमें इन दो शब्दों की वेदना देनी है। मैं यह उच्चारण कर रहा था जिस भूमि पर हमारी आकाशवाणी जा रही है यह भूमि कहीं महाराजा द्रोणाचार्य की विज्ञानशाला रही है, यहाँ वैज्ञानिक मन्थन करते थे और यहाँ मध्यकाल में रूढ़िवादियों ने आकर के अपनी-अपनी धृष्टता यहाँ की। यहाँ मेरी पुत्रियों के शृंगारों को नष्ट भी किया है परन्तु देखो वह भी नहीं रही। आज मानो पुनः से देखो वोई परमाणु उन्नत हो करके, आ करके पुनः से वेदों का पठन-पाठन हो रहा है। मेरा अन्तर्हृदय प्रसन्न हो रहा है, यजमान के लिए मैं सदैव ये कामना करता रहता हूँ, तेरा जीवन अखण्ड बना रहे, पवित्रता की वेदी का प्रसार होता रहे। इसके पश्चात् अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा माँगता हूँ।

## पूज्यपाद-गुरुदेव

मेरे प्यारे ऋषिवर! आज मेरे प्यारे महानन्द जी ने अपनी वेदनामयी कुछ चर्चाएँ कीं। परन्तु वेदना ही है ये विचार तो बड़े भव्य, पवित्र हैं और हमारी शेष चर्चाएँ कल प्रकट होंगी। आज का वाक्य समाप्त होने जा रहा है, शेष चर्चाएँ कल प्रकट होंगी और अब वेद का पठन-पाठन।

वेद पाठ .....

पूज्य महानन्दजी—अच्छा भगवन्! आज्ञा।
पूज्यपाद-गुरुदेव—ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः।।

**दिनाँक** : 27 फरवरी, 1985
**समय** : दोपहर 3 बजे
**स्थान** : लाक्षागृह बरनावा

॥ ओ३म् ॥

# ऋषियों के उद्‌गार

1. ऊर्ध्वागति बनाने के लिए एकान्त स्थल में नाना प्रकार की वनस्पतियों का, नाना वृक्षों के पञ्चाङ्गो को ग्रहण किया जाता है।
2. प्राण के द्वारा ही ब्रह्मचर्य की ऊर्ध्वागति होती है।
3. आज हम उस दर्शन को जाने जो दर्शन हमारे जीवन को ऊर्ध्व बनाता है।
4. ऊर्ध्वागति बनाने के लिए योगी का वैसा आसन, वैसा उसका आहार, वैसा ही व्यवहार, वैसा ही उसका चलन होता है।
5. बारह वर्ष तक योगी को अभ्यास करना चाहिए।
6. ऊर्ध्वागति किसे कहते हैं? जहाँ ब्रह्मरन्ध्र में नाना प्रकार की विशेष नदियाँ हैं, उसे दिव्यदर्शन कहते हैं। दिव्य चक्षु भी कहा जाता है।
7. तीसरा नेत्र क्या है? वह जो ऊर्ध्वागति जो यज्ञशाला है वह जो सुन्दर सा स्थल है उसमें जब ब्रह्मचर्य ऊर्ध्वागति होकर के भ्रमण करता है और वह ऊर्ध्वागति से द्यु-लोक को प्राप्त होता है। उस काल में उसकी एक आभा का प्रायः सुन्दर दिग्दर्शन होता है?
8. मानव की प्रत्येक इन्द्रिय यज्ञमय होनी चाहिए। कैसी यज्ञमय कि प्रत्येक इन्द्रिय से शुभ कामना, शुभ तरङ्गें उत्पन्न होनी चाहिए। शुद्ध शब्द हों, महत्ता वाले शब्द हों, विचार वाले शब्द हों।
9. प्रत्येक इन्द्रिय अपना-अपना कार्य जब शुद्ध रूपों से उसका व्यवहार रहेगा तो प्रत्येक इन्द्रिय यज्ञमय बन जाएगी और यज्ञमय बनके उसकी इसी यज्ञ तक नहीं मानो देवताओं के यज्ञ में द्यु-लोक में वास रहता है।
10. द्यु-लोक की जो समिधा है वह मानव का विचार है।
11. विचार मधुर वाक्य द्वारा हों, स्नेहयुक्त हों, ज्ञान युक्त हों, सुगन्धियुक्त हों।

## योगनिष्ठ पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (शृङ्गी ऋषि जी) की अमृतवाणी संहिता के रूप में

| | | |
|---|---|---|
| *1. | यौगिक प्रवचन माला (भाग 1) | 80.00 |
| *2. | यौगिक प्रवचन माला (भाग 2) | 80.00 |
| 3. | यौगिक प्रवचन माला (भाग 3) | 60.00 |
| 4. | यौगिक प्रवचन माला (भाग 4) | 60.00 |
| 5. | यौगिक प्रवचन माला (भाग 5) | 60.00 |
| 6. | Yogic Wisdom of Ancient Rishis | 80.00 |
| 7. | वेद पारायण-यज्ञ का विधि विधान | 25.00 |
| 8. | आत्म-लोक | 35.00 |
| 9. | धर्म का मर्म | 40.00 |
| 10. | शंका-निवारण | 30.00 |
| 11. | यज्ञ-प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्व | 40.00 |
| 12. | आत्मा व योग-साधना | 35.00 |
| *13. | देवपूजा | 50.00 |
| 14. | अतीत का दिग्दर्शन (भाग 1) | 125.00 |
| 15. | अतीत का दिग्दर्शन (भाग 2) | 125.00 |
| 16. | अतीत का दिग्दर्शन (भाग 3) | 125.00 |
| 17. | रामायण के रहस्य | 35.00 |
| 18. | यज्ञ एवं औषधि विज्ञान | 40.00 |
| 19. | महाभारत के रहस्य | 30.00 |
| 20. | अलङ्कार-व्याख्या | 35.00 |
| 21. | रावण-इतिहास | 50.00 |
| 22. | महाराजा-रघु का याग | 30.00 |
| 23. | वनस्पति से दीर्घ-आयु | 35.00 |
| 24. | मोक्ष प्राप्ति का मार्ग | 35.00 |
| 25. | चित्त की वृत्तियों का निरोध | 35.00 |
| 26. | आत्मा, प्राण और योग | 35.00 |
| 27. | पञ्च-महायज्ञ | 35.00 |
| 28. | अश्वमेघ-याग और चन्द्रसूक्त | 40.00 |
| 29. | याग-मन्जूषा | 40.00 |
| 30. | आत्म-दर्शन | 30.00 |
| 31. | पुत्रेष्टि-याग और मातृ-दर्शन | 30.00 |
| 32. | याग और तपस्या | 60.00 |
| 33. | यागमयी-साधना | 35.00 |
| 34. | यागमयी-सृष्टि | 35.00 |
| 35. | याग-चयन | 40.00 |
| 36. | दिव्य-रामकथा | 120.00 |
| 37. | ज्ञान-कर्म-उपासना | 35.00 |
| 38. | दिव्य-ज्ञान | 40.00 |
| *39. | महाभारत एक दिव्य दृष्टि | 90.00 |
| 40. | महर्षि-विश्वामित्र का धनुर्याग | 40.00 |
| 41. | आत्म-उत्थान | 40.00 |
| 42. | तप का महत्व | 40.00 |
| 43. | अध्यात्मवाद | 40.00 |
| 44. | ब्रह्मविज्ञान | 40.00 |
| 45. | वैदिक-प्रभा | 35.00 |
| 46. | प्रकाश की ओर | 35.00 |
| 47. | कर्तव्य में राष्ट्र | 40.00 |
| 48. | वैदिक-विज्ञान | 35.00 |
| 49. | धर्म से जीवन | 35.00 |
| 50. | आत्मा का भोजन | 40.00 |
| 51. | साधना | 35.00 |
| 52. | त्रेताकालीन-विज्ञान | 40.00 |
| 53. | यज्ञोमयी-विष्णु | 40.00 |
| 54. | यौगिक प्रवचन माला भाग-6 | 80.00 |
| 55. | स्वर्ग का मार्ग | 40.00 |
| *56. | यौगिक प्रवचन माला भाग-7 | 80.00 |
| 57. | माता मदालसा | 50.00 |
| 58. | यौगिक प्रवचन माला भाग-8 | 80.00 |
| 59. | यौगिक प्रवचन माला भाग-9 | 80.00 |
| 60. | यौगिक प्रवचन माला भाग-10 | 80.00 |
| 61. | याग एक सर्वाङ्ग पूजा | 80.00 |
| 62. | यौगिक प्रवचन माला भाग-11 | 80.00 |
| *63. | यौगिक प्रवचन माला भाग-12 | 80.00 |
| 64. | मानव कल्याण की चर्चाएं | 50.00 |
| 65. | प्रभु-दर्शन | 50.00 |
| *66. | यौगिक प्रवचन माला भाग-13 | 80.00 |
| 67. | समाज उत्थान का मार्ग | 50.00 |
| *68. | यौगिक प्रवचन माला भाग-14 | 80.00 |
| *69. | ब्रह्म की ओर | 50.00 |
| 70. | ईश्वर मिलन | 50.00 |
| 71. | यौगिक प्रवचन माला भाग-15 | 80.00 |

*सहजिल्द का मूल्य 20 रु. अतिरिक्त है।

# पुस्तक प्राप्ति के स्थान

योगनिष्ठ पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज की अमृतवाणी का साहित्य सँहिता, कैसेट्स, सी. डी. व डी. वी. डी. के रूप में निम्न स्थानों पर उपलब्ध हैः–

1. श्री महानन्द संस्कृत महाविद्यालय, लाक्षागृह, बरनावा, जिला–बागपत, (उ.प्र.)। मोबाइल नं 09719622950
2. श्री गुरुवचन शास्त्री, मकान नं. 165/30ए, दक्षिण भोपा रोड़, निकट माढ़ी की धर्मशाला, नई मण्डी, मुजफ्फरनगर (उ. प्र.)। मोबाइल नं. 09412888050
3. सुश्री. नीरू अबरोल, के-3 लाजपत नगर-3, नई दिल्ली। दूरभाष नं. 011-41721294
4. डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, A-59 पंचशील एन्क्लेव नई दिल्ली-110017 दूरभाष नं. 011-41030481
5. श्री जितेन्द्र चौधरी, ए-84, मालवीय नगर, नई दिल्ली-110017, मो. नं. 9811707343
6. श्री अनिल त्यागी, सी-47 रामप्रस्थ, गाजियाबाद (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0120-4165802
7. श्री आशीष त्यागी, डी-293, रामप्रस्थ, पोस्ट ऑफिस चन्द्रनगर, गाजियाबाद पिन कोड-201011 (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0120-2642052
8. श्री लोमश त्यागी, 106/4 पंचशील कालोनी गढ़ रोड़, मेरठ, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09410452076
9. श्री विवेक त्यागी, 16ए, अशोक कॉलोनी, अल्कापुरी, हापुड, (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0122-2316196
10. श्री संजीव त्यागी, 1107, सैक्टर-3, बल्लभगढ़, फरीदाबाद हरियाणा। मोबाइल नं. 09910589486
11. मैं. हर्ष मेडिकोज, ए-2/31, सैक्टर-110–मार्किट नोएडा, फेस-2, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 9899228860, 9871367937
12. पवन त्यागी सुपुत्र श्री राजाराम त्यागी, मौ. खड़खड़ियान, माता, ग्राम खरखौदा, जिला मेरठ (उ.प्र.) मोबाइल नं. 7536097171
13. श्रीमती बाला, 251, दिल्ली गेट, नई दिल्ली। दूरभाष नं. 011-23282088
14. डॉ. अशोक कुमार आर्य, आर्यावर्त कालोनी निकट मुरादाबादी गेट, अमरोहा, जिला-जे.पी. नगर (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09412139333
15. श्री सुमन कुमार शर्मा, जे-380, सैक्टर बीटा-2, ग्रेटर नोएडा, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09313530505
16. श्री सतीश भारद्वाज, ग्राम बहेडी, रोहाना मिल, जिला मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)।
17. मैं. विजय कुमार, गोविन्द राम हासानन्द, 4408, नई सड़क, दिल्ली। दूरभाष नं. 011-23977216

## मासिक सहयोग

| | |
|---|---|
| श्री हरीराम गुप्ता, केसर स्टील, वजीरपुर, दिल्ली | 1000 रुपये |
| श्री चिंतामणि त्यागी एवं श्री जगमोहन त्यागी बरला, मुजफ्फरनगर | 1000 रुपये |
| श्री संजीव त्यागी (दिनकरपुर) फरीदाबाद, हरियाणा | 1000 रुपये |
| श्री अरुण त्यागी, राजनगर, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश | 500 रुपये |
| श्री विनोद त्यागी सुपुत्र श्री जयप्रकाश त्यागी मकनपुर, गाजियाबाद | 500 रुपये |
| मा. कार्तिक त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा | 251 रुपये |
| मा. लोमश त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा | 251 रुपये |
| डॉ. शुचि, डॉ. राजीव चावला, आणद, गुजरात | 250 रुपये |
| श्री राकेश शर्मा, विराट नगर, पानीपत, हरियाणा | 250 रुपये |
| श्री कृष्ण लाल बत्रा, इन्द्री, जिला करनाल | 201 रुपये |
| मास्टर कवन्धि, रामप्रस्थ, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश | 101 रुपये |
| मास्टर सिद्धार्थ, अँकुर अपार्टमैन्ट, दिल्ली | 101 रुपये |
| मास्टर अभ्युदय त्यागी, न्यू जर्सी, अमेरिका | 101 रुपये |

## नम्र-निवेदन

पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज ने अपने प्रवचनों में वेदमन्त्रों का गान करते हुए उनकी प्रचलित भाषा में व्याख्या की है। उसी अमृत वाणी को जनकल्याण के लिए ''सँहिता'' के रूप में प्रकाशित करने के लिए वैदिक अनुसन्धान समिति सभी श्रद्धालु एवम् दानदाताओं से सहयोग के लिए आह्वान करती है जिससे कि प्रकाशन का कार्य सुचारू रूप से ऊर्ध्वा गति को प्राप्त होता रहे। सहयोग की राशि समिति के बैंक खाते में स्वेच्छानुसार भेजने के लिए बैंक का विवरण निम्न प्रकार से है :-

**वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)**

**पंजाब नैशनल बैंक, खान मार्केट, नई दिल्ली**

**बैंक खाता नं. - 0149000100229389, IFSC Code – PUNB–0014900**

**website : www.shringirishi.in**

**Email : contact@shringirishi.in**

योगमुद्रा में प्रवचन करते हुए पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज

# उद्‌बोधन

आज पर्ययण समय में वेदों का गान गाते-गाते हमें ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे विधाता हमारे द्वारा कोई अमूल्य वस्तु प्रदान कर रहा हो। इसका क्या अभिप्राय है कि वेदों का गान गाते समय हृदय में आनन्द कहाँ से आ जाता है। वह कौन-सी अमूल्य निधि है जो हमें परमात्मा ने प्रदान की है? आज हम उस विधाता के बहुत बड़े ऋणी हैं जिस प्रकार मुनिवरो! प्रजा राजा की ऋणी होती है, क्यों होती है? कौन-सी प्रजा ऋणी होती है? मुनिवरो! जो प्रजा राजा के बनाए हुए नियमों के आधार से नहीं चलती, उसके आदर्शों का पालन नहीं करती। इसीलिए आज हम परमात्मा के ऋणी बने बैहे हैं। जो मानव परमात्मा के नियम का अच्छी प्रकार पालन नहीं करता, नाना प्रकार की अशुद्धि करता है, परमात्मा की नाना प्रकार की आलोचनाएँ करता है, वह मानव परमात्मा का महाऋणी है।

**पूज्यपाद-गुरुदेव**

(पुष्प-3 – प्रवचन–दिनांक 9 दिसम्बर 1962)